दलित क्रान्ति-दर्शन

लेखक :
रामलाल "विवेक"
सहायक लोक अभियोजक, प्रथम थेर
न्यायालय परिसर, हनुमानगढ़
जिला-गंगानगर (राज.)

संघी प्रकाशन
जयपुर : उदयपुर

प्रकाशक : विजेन्द्र कुमार संघी
संघी प्रकाशन
सी– 77, महावीर मार्ग,
मालवीय नगर,
जयपुर–302017 (राज.)
शाखा : 255, बापू बाजार,
उदयपुर–313001 (राज)

"भारतीय दलित साहित्य अकादमी, उदयपुर (राजस्थान शाखा)
की वित्तीय सहायता से प्रकाशित"

मूल्य : पैंसठ रुपये

संघी प्रकाशन, जयपुर–उदयपुर द्वारा प्रकाशित/प्रथम संस्करण : 1991/
गजेन्द्र प्रिन्टर्स, किशनपोल बाजार जयपुर में मुद्रित।

DALIT KRANTI DARSHAN
by Ram Lal 'Vivek' Rs. 65.00

समर्पण

दलित जन-क्रान्ति
के जनक,
डॉ. भीमराव अम्बेडकर,
जिनके अथक संघर्ष के
परिणामस्वरूप,
हम यहाँ तक पहुँचे हैं,
की पवित्र स्मृति में
श्रद्धा सहित समर्पित है।

भूमिका

मान्य. रामलाल विवेक रचित 'दलित क्रान्ति दर्शन' साहित्य जगत में प्रस्तुत करते हुए परम प्रसन्नता और सन्तोष का अनुभव हो रहा है। मान्य विवेक निरन्तर दलित वर्ग के उत्थान हेतु लेखन कार्य करते आ रहे है। इससे पूर्व भी उनकी इस विषय में पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

पुस्तक में सम्बन्धित विषयों पर इनके नौ निबन्ध प्रकाशित किये जा रहे है। पुस्तक की विशेषता है कि इसमे तथ्यात्मक विवरण प्रस्तुत करते हुए समीक्षात्मक दृष्टिपात किया गया है। यह लेखक की अध्ययनशीलता एव चिन्तन का ही परिणाम है।

पुस्तक में डॉ. अम्बेडकर को दलित क्रान्ति के प्रथम प्रणेता मानते हुए उनके विचारों को स्थान-स्थान पर उद्घृत किया गया।

भारत की जनसंख्या में बहुजन समाज का अनुपात पिच्यासी प्रतिशत है। इस वर्ग के उत्थान एवं विकास के बिना देश का उत्थान सर्वथा असम्भव है।

स्वतन्त्र भारत के संविधान में वे सब प्रावधान विद्यमान हैं कि उन पर पूरी ईमानदारी से अमल किया जाता तो सदियों से दलित, शोषित बहुजन समाज को समता और न्याय प्राप्त होता, किन्तु ये प्रावधान पुस्तको मे कैद होकर रह गये। राजनीति की रोटियां सेंकने के लिये इनकी दुहाई तो दी जाती रही पर उन्हे कार्य रूप में परिणित नही किया गया। आजादी के बाद के 43 वर्षों के इन अनुभवों से बहुजन समाज को सीख लेनी चाहिए और उसे डॉ. बाबा साहब अम्बेडकर द्वारा बताये गये "स्वयं की सहायता स्वयं" करने के महामन्त्र पर विश्वास करके, शिक्षा, संगठन और संघर्ष के शस्त्रों से स्वय को सुसज्जित करके अपने हकों की लड़ाई को विजय के चरम लक्ष्य तक पहुंचाना चाहिए। ऐसा किये बिना उसकी गति नही है।

शासकों की 'बांटो और राज करो' की कूटनीति ने देश को अनेको प्रादेशिक, जातीय एवं साम्प्रदायिक वर्गों मे विभक्त करके पारस्परिक संघर्ष म उलझा दिया। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि भारत जैसा सशक्त और समृद्ध देश शक्तिहीन एवं निर्बल हो गया।

बन्धुवर विवेक साहित्य द्वारा वैचारिक क्रान्ति लाने एवं दलितो मे चेतना जगाने के लिए प्रयासरत हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक दलित साहित्य अकादमी के माध्यम से प्रकाशित करवाने हेतु उदयपुर आकर मुझसे भेंट की। जब मैंने उन्हें अकादमी की वस्तुस्थिति से अवगत कराया कि इस अकादमी को सरकार से कोई आर्थिक अनुदान नही मिलता है और प्रकाशन सहायता देना सम्भव नहीं होगा। राजस्थान साहित्य अकादमी को हिन्दी पुस्तकें प्रकाशित करवाने हेतु राजस्थान

सरकार 18 लाख रुपये का अनुदान प्रति वर्ष देती है किन्तु राजस्थान साहित्य अकादमी दलित वर्ग की पुस्तकों पर कोई प्रकाशन सहायता नहीं देती है जबकि 18 लाख रुपये में से 10 लाख रुपये दलित वर्ग का हिस्सा होता है। इस प्रकार हमारी जेबों से टैक्स वसूल कर सरकार सवर्ण साहित्य की समृद्धि में लगा रही है जो सरकार की पक्षपातपूर्ण नीति का परिचायक है। अब दलित साहित्य अकादमी ने अपनी आवाज बुलन्द की है और सरकार एवं साहित्य के नाम पर मठाधीशीगिरी चलाने वाली राजस्थान साहित्य अकादमी से अपना हिस्सा लेने की पुरजोर मांग शुरू कर दी है।

बन्धु विवेक ने दलित अकादमी की इन गतिविधियों की सराहना की तथा इसके विचार क्रान्ति अभियान में अपना पूर्ण सहयोग देने का वचन दिया। अपने वचन को निभाते हुए उन्होंने अपने ही बलबूते पर पुस्तक प्रकाशन हेतु सहयोग राशि एकत्र की और अकादमी के खाते में जमा करवा दी ताकि अकादमी अपने साहित्य प्रकाशन के महत्वपूर्ण कार्य को निष्पादित करने की ओर अग्रसर हो सके।

इस रूप में अकादमी की ओर से दी गई प्रकाशन सहायता से प्रकाशित होने वाली यह प्रथम पुस्तक है। इस पुस्तक के प्रकाशन का श्रेय सूरतगढ़, जिला-गंगानगर (राज.) के मान्य सोमदत्त, आर. ए. एस. एवं माननीया शशि सोमदत्त एडवोकेट को जाता है जिन्होंने अपनी ओर से भरपूर आर्थिक सहायता देकर अकादमी द्वारा पुस्तक प्रकाशन का न केवल मार्ग प्रशस्त किया वरन् समाज के सम्मुख एक अनुकरणीय उदाहरण भी प्रस्तुत किया है। अकादमी उनके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करती है।

'दलित क्रान्ति दर्शन' को और अधिक समाजोपयोगी बनाने तथा एक चिन्तन सारिणी में बांधने के लिए मान्य बी. एल. मेघवाल, आर. ए. एस. ने जो सुझाव दिये, तदनुसार बन्धुवर विवेक द्वारा पाण्डुलिपि में संशोधन, परिवर्धन करने से पुस्तक और भी सुन्दर बन पड़ी है।

विश्वास है कि इस पुस्तक के माध्यम से दलित वर्ग में स्वाभिमान और आत्मसम्मान की भावना जागृत होगी और वे संगठित होकर शक्तिमान बनेंगे।

पुस्तक प्रकाशन के साथ ही मैं पुस्तक लेखक बन्धु रामलाल विवेक को अपनी एवं अपनी अकादमी की ओर से बधाई देती हूं। साथ ही यह आशा और विश्वास भी रखती हूं कि आप दलित वर्ग का उत्थान करने, उनमें स्वाभिमान जगाने एवं सम्मान से जीवन जीने हेतु निरन्तर प्रेरक साहित्य की रचना करते रहेंगे।

शुभ कामनाओं सहित

उदयपुर
14 अप्रैल 1991
डॉ. अम्बेडकर जन्म शताब्दी वर्ष

डॉ कुसुम मेघवाल, प्रदेशाध्यक्ष
भारतीय दलित साहित्य अकादमी
344, अम्बामाता स्कीम,
उदयपुर (राज.)

लेखकीय

"दलित क्रान्ति दर्शन", आप तक पहुँचाते हुए मुझे अपार प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। यह पुस्तक दलित समाज मे नया उत्साह पैदा करे, ताकि वे असमानता, भेदभाव एवम् शोषण की व्यवस्था के विरुद्ध संगठित होकर, सफल संघर्ष करें, तभी मेरा यह विनम्र प्रयास सफल होगा।

मेरा यह विश्वास निरन्तर बढ़ता जा रहा है कि आने वाले समय में भारतीय दलित, मजदूर, पिछड़ा वर्ग, महिलायें और अल्पसंख्यक, एक जुट होकर संयुक्त मोर्चा बनायेंगे। लोकशक्ति का जागरण होगा तथा विचार-क्रान्ति, जन जागरण व जन आन्दोलन द्वारा हमारे देश की सामाजिक, राजनीतिक एवम् आर्थिक व्यवस्थाओं में जबरदस्त परिवर्तन होगा।

समता मूलक जाति विहीन एवं वर्ग विहीन समाज की रचना होगी। सभी भारतीयों को बिना जाति धर्म या लिंग का भेद किये, विकास के समान अवसर मिलेंगे। राष्ट्र मजबूत होगा तथा भारत एक बार फिर विश्व के अन्दर शान्ति, बन्धुत्व व मानवता की पताका लहरायेगा।

मेरा यह भी दृढ़ विश्वास है कि दलित समाज आने वाले जन आन्दोलन का नेतृत्व करेगा। यह तभी सम्भव होगा जब दलित वर्ग के लोग अपने मसीहा डॉ. अम्बेडकर के शिक्षा, संगठन एवं संघर्ष के आह्वान को समझकर, जागृत होकर सामूहिक रूप से जबरदस्त प्रयास करें।

क्रान्ति दर्शन पर यह मेरी चौथी रचना है। इससे पूर्व मैंने इस विषय पर भारत में विचार-क्रान्ति, क्रान्ति दर्शन और विवेक क्रान्ति दर्शन लिखी है। भारत मे विचार-क्रान्ति पुस्तक का प्रकाशन गत वर्ष 1989 में श्याम प्रकाशन फिल्म कॉलोनी, जयपुर से हुआ है तथा विवेक क्रान्ति दर्शन को इसी वर्ष 1989-90 मे जन चेतना मंच फालना ने प्रकाशित किया है। इन दोनों रचनाओं के सम्बन्ध में देश भर से मुझे आशा जनक प्रतिक्रियायें प्राप्त हो रही हैं। जिनसे मेरा उत्साह व मनोबल बढ़ा है।

इस पुस्तक की रचना की प्रेरणा मुझे भारतीय दलित साहित्य अकादमी के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. सोहन पाल सुमनाक्षर, अकादमी की प्रान्तीय अध्यक्ष डॉ. कुसुम मेघवाल एवम् डॉ. डी. आर. जादव से मिली है, जिनके प्रति मैं अपना हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ। इस अकादमी ने मुझे जनवरी 1990 में डॉ अम्बेडकर प्रान्तीय पुरस्कार देकर दलित साहित्य सृजन की ओर मोड़ दिया है।

इस पुस्तक की विषय-वस्तु को अन्तिम रूप देने में मेरे शुभेच्छु मित्र-गण विशेषतया श्री बी. एल. मेघवाल, आर. ए एस. उदयपुर एवम् श्री लखनाराम परमार, संयोजक डॉ. अम्बेडकर नवयुवक संघ, पाली (राजस्थान) का उल्लेखनीय सहयोग रहा है, जिसके लिए मैं उनके प्रति आभारी हूं।

इस पुस्तक की पाण्डुलिपि तैयार कराने मे मेरे ही कार्यालय के वरिष्ठ लिपिक श्री श्याम सुन्दर कालानी का सराहनीय योगदान रहा है। वे मेरे लेखन-कार्य में समर्पित भावना से सहयोग देते रहे हैं। मैं उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूं।

यह पुस्तक मैं अपनी प्रेरणा के मुख्य स्रोत भारतरत्न डॉ. भीमराव अम्बेडकर की पुनीत स्मृति में उनके जन्म शताब्दी वर्ष के उपलक्ष में, श्रद्धा-सुमन के रूप में समर्पित करता हूं।

पुस्तक आपको कैसी लगेगी, यह तो आप ही बता सकते हैं। कृपया अपने सुझाव एवम् प्रतिक्रियायें मेरे निम्नांकित पते पर भेजकर अनुग्रहित करें।

दिनाङ्क : 19.7.90

रामलाल विवेक
सहायक लोक अभियोजक,
प्रथम श्रेणी, हनुमानगढ़ (राज.)

विषय-सूची

अध्याय एक

दलित कौन ?

"दलित" शब्द की व्युत्पत्ति दलन शब्द से हुई है। दलन का अभिप्राय है कि किसी वस्तु के मूल स्वरूप को दबाकर क्षतिग्रस्त या नष्ट-भ्रष्ट कर दिया जाये। जैसे कि चक्की के दो पाटो के बीच डालकर अनाज के दानों को दल दिया जाता है। इस सन्दर्भ में दलित का अभिप्राय उस व्यक्ति समूह से है जिसे कि समाज के धार्मिक, आर्थिक एवं राजनीतिक ढाचे में, शोषक सत्ताधारियों द्वारा शोषण की चक्की में दल दिया गया है तथा शोषण एवं उत्पीड़न का शिकार बनाया गया है।

दलित वर्ग शोषण का शिकार उन व्यक्तियों का समूह है जिन्हे सामाजिक दृष्टि से हेय समझा जाता है, तथाकथित उच्च वर्ग के लोग जिन्हें छूना तक भी पाप समझते है, आर्थिक दृष्टि से जिनके पास सम्पत्ति के नाम पर केवल शारीरिक श्रम ही जीविका का साधन होता है और धार्मिक दृष्टि से सारे सिद्धान्त उन्हे प्रताड़ित, अपमानित एवं शोषित बनाये रखने के लिये गढे गये हैं। उन्हें कथित धर्म के अनुष्ठान स्वयं करने तक का और अपने आराध्य तथाकथित भगवान के मन्दिरों में प्रवेश तक का अधिकार नही होता है। राजनीतिक दृष्टि से सदा जो दूसरो के पिछलग्गू बने रहते है तथा स्वयं शासक एवं नायक बनना जिनके लिये असम्भव है। आजादी से पूर्व जिन्हें शिक्षा, अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक प्रतिष्ठा पाने तक का कोई अधिकार उपलब्ध नहीं था। तथाकथित सवर्ण स्वामियों की सेवा करते रहना, अपमान सहना, घोर गरीबी एवं दरिद्रता का जीवन बिताना, जिनकी नियति समझी जाती थी।

दलित वर्ग की उत्पत्ति, हिन्दू वर्ण-व्यवस्था का दूषित परिणाम है। वर्ण व्यवस्था को जन्म देने वाले वे विदेशी थे जो आज से करीब 3,500 वर्ष पूर्व मध्य ऐशिया से आक्रान्ता के रूप में भारत में आये तथा जिन्होने भारत के मूल आर्य निवासियों को परास्त कर दास बना लिया। अपने शासन की जड़ें स्थाई बनाने

के लिये इनके नेता मनु ने वर्ण-व्यवस्था का सृजन किया। आर्यों ने धर्म सत्ता, राज्य सत्ता एवं अर्थ सत्ता को हथिया कर, अपने को सवर्ण घोषित कर दिया। ऊपर के तीन वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य को क्रमशः धर्म सत्ता, राज्य सत्ता एवं अर्थ सत्ता का अधिकारी बना दिया तथा हारे हुए द्रविड़ों को सदा-सदा के लिये अपना गुलाम बनाये रखने के लिये शूद्र घोषित कर दिया। ऊपर के तीनों वर्गों की सेवा का दायित्व शूद्रों पर डाल दिया गया। मनु ने मनुस्मृति नामक ग्रन्थ की रचना की। जिसमे उसने शूद्रो को शिक्षा के अधिकार से वंचित कर, घोषणा की कि यदि शूद्र के कान में भूल से भी वेद का मन्त्र चला जाये तो उसके कान मे शीसा पिघलाकर डाल देना चाहिये। यदि शूद्र ऊँचे आसन पर बैठे तो उसके चूतड़ काट डाले जाने चाहिये। शूद्र उपदेश दे तो उसकी जीभ काट ली जाये। शूद्र की सम्पत्ति को लूट लिया जाये। उसे अच्छे वस्त्र पहनने व मकान बनाने के अधिकार से भी वंचित कर दिया गया। यही शूद्र वर्ण कालान्तर में अनेक प्रकार की सेवाओं से सम्बन्धित होने के कारण जातियों एवं प्रजातियों में बँटता चला गया। सदियों से इस वर्ण के लोगों का सवर्ण लोगों द्वारा दलन, उत्पीडन एवं शोषण होता आ रहा है। आज इन्ही वर्गों के लोग दलित वर्ग के नाम से जाने जाते लगे है।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य के अलावा सम्पूर्ण हिन्दू समुदाय की उत्पत्ति तथाकथित शूद्र वर्ण से हुई है, जो कालान्तर में अनेक जातियों एवं प्रजातियों मे बंट कर विभाजित होता गया और इसी विभाजन एवं फूट के कारण शोषण का शिकार भी रहा। इस तरह ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य के अलावा समस्त हिन्दू समुदाय दलित वर्ग के अन्तर्गत ही आ जाता है चाहे इस तथ्य को स्वीकार करे या न करे।

हिन्दू धर्म के शूद्र वर्ण से उत्पन्न जाति के अनेक लोगो ने स्वेच्छा से या जबरदस्ती किन्ही भी कारणों से धर्मान्तरण किया। यह धर्मान्तरण की प्रक्रिया मुस्लिम काल के आगमन से आरम्भ हुई और आज भी जारी है। अतः दलित समाज से धर्मान्तरित मुसलमान, सिक्ख, ईसाई एवं बौद्धों की संख्या भी प्रचुर मात्रा मे है। ये लोग मूलतः दलित वर्ग के ही थे। तथा आज भी इनकी स्थिति दलित वर्ग से मिल रही है।

इस तरह से आज की स्थिति मे दलित वर्ग को हम तीन भागो मे विभक्त हुआ पाते है :—

(1) भारतीय संविधान की अनुसूचि में अनुसूचित जाति एवं जन जाति मे सम्मिलित जातियों के लोग एवं आदिवासी जन-समूह, दलित वर्ग के प्रमुख अंग हैं।

(2) अन्य पिछड़े वर्ग के लोग, जिनका कि सामाजिक स्थान दलित वर्ग के लोगों से थोड़ा ऊपर अवश्य है परन्तु तथाकथित उच्च वर्ग के लोग उन्हें अपने से नीचा ही समझते हैं तथा आर्थिक दृष्टि से अन्य पिछड़े वर्ग के लोगों मे कोई विशेष अन्तर नही है, आज की परिस्थितियों में दलित वर्ग के अन्तर्गत ही गिने जा सकते हैं।

(3) दलित वर्ग से धर्मान्तरित वे लोग जिन्होंने इस्लाम, बौद्ध सिक्ख या ईसाई धर्म ग्रहण कर लिया है दलित वर्ग के अन्तर्गत ही गिने जा सकते है ।

इस तरह से यदि व्यापक दृष्टि से देखा जाये तो भारत के वे समस्त श्रम-जीवी एव सर्वहारा लोग जो सामाजिक उपेक्षा, गरीबी एवं शोषण के शिकार हैं दलित वर्ग के अन्दर समाहित हो जाते हैं। इस वर्ग मे समस्त मजदूर, भूमिहीन किसान, कारीगर, दस्तकार और महिला वर्ग भी समाहित हो जाता है क्योंकि इन सभी श्रमजीवियो का शोषण पूँजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत हो रहा है ।

यदि हम कार्ल मार्क्स के सर्वहारा वर्ग को व्यापक दृष्टि से देखें तो पता चलता है कि सर्वहारा वर्ग से जिसे कि हम भारतीय सन्दर्भ मे दलित वर्ग कहते हैं वे सभी साधन विहीन श्रमिक आ जाते है, जिनके पास केवल शारीरिक श्रम ही जीविका का माध्यम है, उनके श्रम से देश की समूची अर्थव्यवस्था संचालित होती है तथा उनके श्रम का अधिकांश भाग पूँजीपति वर्ग लूट लेता है। इन सर्वहारा शोषित दलितों का उद्धार, सर्वहारा वर्ग चेतना, वर्ग संघर्ष एवं समाजवाद के द्वारा ही सम्भव है ।



अध्याय दो

दलित शोषण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

दलित समाज की समस्याओं को समझने के लिये यह आवश्यक है कि इन समस्याओं के मूल वर्ण व्यवस्था एवं उससे उत्पन्न जाति-व्यवस्था का गहराई से अध्ययन किया जावे। जाति-व्यवस्था को समूल नष्ट किये बिना दलित समाज की समस्याओं का समाधान सम्भव नही है। दलित समाज को यदि अपनी समस्या का निराकरण करना है तो या तो उन्हे साहसपूर्ण संघर्ष करके वर्ण एव जाति की धारणाओं को नष्ट करना होगा या स्वयं को इस दूषित व्यवस्था से अलग करना होगा, इसके अलावा दलित वर्ग की उन्नति का कोई उपाय नही है।

दलित समाज को इस ऐतिहासिक सच्चाई पर गम्भीरता से विचार करना होगा कि वे भारत के मूल निवासी है। उनके पूर्वज भारत के आदि निवासी थे। इनकी आज से करीब 5000 वर्ष पूर्व एक फली फूली सभ्यता थी। जिसे सिन्धु घाटी की सभ्यता के नाम से जाना जाता है।

सिन्धु सभ्यता को नष्ट करने वाले विदेशी आक्रान्ता थे। ये केस्पियन सागर क्षेत्र के मूल निवासी थे जो बाद में यूरोप एवं ऐशिया के भिन्न-भिन्न भागो मे बस गये। इनकी एक शाखा के लोग मध्य ऐशिया की ओर से 1500 ई.पू. के लगभग भारत आये और पंजाब, हरियाणा तथा उत्तरी भारत के अनेक स्थानों पर आकर बस गये। उन्होने भारत के मूल निवासियों से लगातार वर्षों तक युद्ध किया तथा परास्त कर दिया। भारत के मूल निवासियों को परास्त कर यहा के स्वामी बन बैंठे। तथा उत्तरी एव पूर्वी भागों तक फैलते गये परन्तु लम्बे समय तक इनकी शक्ति के गढ दक्षिण भारत मे उनका प्रवेश सम्भव नही हो सका।

वर्ण व्यवस्था : एक घृणित साजिश :

इन्होने अपनी जडे स्थाई बनाने के लिये वर्ण व्यवस्था का सृजन किया।

उन्होंने स्वयं को धर्म सत्ता, राज्य सत्ता एवं अर्थ सत्ता का स्वामी बनाये रखने के के लिये अपने में से ऊपर के तीन वर्णों ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य वर्ण की सृजना की तथा स्वयं को सवर्ण तथा कुलीन घोषित कर दिया।

ब्राह्मणों ने धार्मिक कर्मकाण्ड के नाम पर कई संस्कारों एवं नीतियों का सृजन किया ताकि जन्म से लेकर मृत्यु तक बाकी सभी वर्णों के लोग उनके अधीन बने रहें। हारे हुये को उन्होंने सदा-सदा के लिए अपना गुलाम, सेवक एवं उत्पादन यन्त्र बनाये रखने के लिये शूद्र घोषित किया। इस तरह से वर्ण व्यवस्था जैसी घृणित सामाजिक व्यवस्था का जन्म हो गया। आगे चलकर यह वर्ण व्यवस्था अनेक जातियों की जन्मदात्री बनी। भारत विभाजित होता चला गया और नतीजा निकला सदियों की गुलामी।

वर्ण व्यवस्था के सम्बन्ध में प्रसिद्ध फ्रेंच इतिहासकार एबे डुबायस का कथन है कि :—

प्रारम्भ से ही कर्म काण्डों और सामाजिक जीवन पर अपने पूर्ण अधिकार में विश्वास करते थे। द्रविडों को परास्त करने पर उन्होने स्वयं को द्विज तथा यहाँ के मूल निवासियों को दास अथवा शूद्र कहना आरम्भ कर दिया। आगे चलकर अपनी अधिकार सत्ता की अलौकिकता प्रतिष्ठित करने के लिये स्वयं को ब्राह्मण अर्थात् ब्रह्म का प्रति रूप कहने लगे। अन्तर्विवाह, कर्मकाण्ड आदि साधनों से उन्होने द्रविडों से अपना मिश्रण रोकने का प्रयत्न किया। साथ ही उन्होने शूद्रों को निम्न स्तर और निम्न रक्त का सिद्ध करने के लिये अनेक भ्रामक धारणाएं फैलाई। इस तरह ब्राह्मणवादी नीति के कारण जाति प्रथा, ऊँच-नीच व छूआछूत का जन्म हुआ।

डॉ. मजूमदार का मत इस विषय मे निम्न प्रकार है— संस्कृति के संघर्ष और प्रजातीय सम्पर्क ने ही भारत में प्रजातीय समूहों का निर्माण किया है। जाति की उत्पत्ति को समझने के लिये हमे संस्कृत के शब्दों का सहारा लेना चाहिये। ऐसा ही एक शब्द वर्ण है जिसका अर्थ रंग और वर्ग दोनो होता है। आरम्भ मे वर्ण एक-दूसरे के रंग के आधार पर मिले थे। जो इण्डो आर्यन प्रजातीय और देश के मूल निवासियों प्राग-द्रविड तथा आदि भू-मध्य सागरीय प्रजातीय के मिश्रण से बने थे। इस प्रजातीय मिश्रण के अनेक कारण थे। जैसे आक्रान्ता समूहों में स्त्री की कमी, उनके घुम्मकड़ जीवन मे भारत के मूल निवासियों को स्थाई जीवन का आकर्षक विकसित द्रविड संस्कृति तथा उसकी मातृ सत्तात्मक व्यवस्था, देवियों की पूजा, पुरोहित व्यवस्था, विविध संस्कार आदि।

डॉ. मजूमदार की मान्यता है कि द्रविडों को परास्त करने के कुछ समय बाद ही आर्य ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य तीन उच्च वर्णों मे विभाजित हो गये जब कि द्रविड़ो को सबसे नीचे शूद्र वर्ण की श्रेणी प्रदान की गई।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्ण एवं जाति व्यवस्था ब्राह्मणों की चतुर राजनीतिक योजना थी। वे बिना परिश्रम किये बाकी के लोगों पर शासन करना चाहते थे। अतः उन्होंने धार्मिक कर्मकाण्ड, विधि विधान, निर्माण राजनीतिक संचालन की प्रक्रियायें, अपने हाथों मे रख ली। जिससे कि वे सत्ता को अपने अनुकूल बनाये रखने के लिये शास्त्रों की रचना करते रहें। और इन व्यवस्थाओ को उन्होने धार्मिक रूप दे दिया ताकि बाकी वर्गों के लोग धर्म भीरू बनकर उनके आदेशो का आंख मूंद कर पालन करते रहें।

ब्राह्मणों को यह भय भी था कि उनकी सत्ता पर आक्रमण हो सकता है।

अतः उन्होंने क्षत्रियों को अपना रक्षक बनाने के लिये दूसरे नम्बर पर रखा । वे स्वयं को ब्रह्म का अवतार घोषित करने लगे । तथा उन्होंने क्षत्रियों को भगवान का अवतार घोषित कर दिया । देश की सम्पूर्ण भूमि उत्पादन के साधन एवं व्यवसाय पर अपना कब्जा बनाये रखा एवं व्यापार एवं पशु पालन का उत्तरदायित्व वैश्यों पर डालकर उन्हे तीसरे दर्जे का सम्मान दिया ।

भूमि पर अन्न पैदा करने, मकान बनाने, वस्तुयें निर्मित करने, सफाई करने व अन्य सेवा कार्य करने के लिए उन्हें ऐसे गुलामों की आवश्यकता थी, जो उनके अधीन उनकी मेहरबानी पर जिन्दा रहे और उनके आदेशों के अनुसार उनकी सेवा करते रहें । पर बदले में कुछ भी उन्हें नहीं दिया जाये । अतः हारे हुये द्रविड़ों को जीवन दान देकर, सदा-सदा के लिये अपना गुलाम बनाये रखने के लिये, उन्होंने शूद्र वर्ण की रचना की । आज भी सम्पूर्ण श्रमजीवी वर्ग, दलित वर्ग के रूप में, इसी कारण शोषण का शिकार होकर, अपमान की जिन्दगी जी रहा है ।

आदिम जन जातियों का शोषण

हमारे देश में अनेक जन जाति समूह वनों, जंगलों एवं दूर दराज के पहाड़ी क्षेत्रों में आज भी पशुओं की सी जिन्दगी व्यतीत कर रहे हैं । ये लोग घोर दरिद्रता अशिक्षा एवं अन्ध विश्वासों के शिकार है तथा देश की आम धारा से कटे हुए अभी भी आदिम मानव की जिन्दगी जीने को विवश हैं ये आदिम जन जाति समूह भी दलित वर्ग की ही श्रेणी में आते हैं । इनके साथ-साथ अनेक ऐसे जन-समूह है जो केवल भिक्षा वृत्ति, खेल तमाशों एवं टोने टोटके के आधार पर ही जीवन निर्वाह करते हैं ऐसे लाखों लोग सामाजिक उपेक्षा एवं दरिद्रता का जीवन जी रहे है । वे भी दलित वर्ग के ही अंग है । आज की भयंकर आर्थिक विषमता एवं पूंजीवादी व्यवस्था ने, बढ़ती जा रही बेरोजगारी ने, औद्योगिक उत्पादन की मशीनी व्यवस्था ने, ग्रामीण जीवन को, कुटीर उद्योगों को, चौपट कर दिया है । रोजगार की तलाश में, गांवों से शहरों की ओर निरन्तर देश की बहुत बड़ी आबादी को जाने को विवश कर दिया है । ये बेघर, बेरोजगार लोग रोजगार की तलाश में शहरों की फुटपाथों पर जीने को विवश है । इन लोगों ने भी दलित वर्ग को व्यापक आयाम दिया है ।

धर्म की आड़ में शोषण का उपाय

ब्राह्मणों ने केवल अपने स्वार्थ के लिये, वर्ण व्यवस्था का सृजन ही किया

बल्कि उसे स्थाई एवं महिमा मण्डित करने के लिये, अलौकिक एवं ईश्वरीय विधान घोषित करने को भी भरपूर चेष्टा की, ताकि शोषित दलितों को उनकी कूटनीति का पता न चल सके और वे शोषण को, निम्नता एवं अपमान की जिन्दगी को, ईश्वर का विधान मानकर जीते रहें, ताकि सभी विद्रोह न कर सकें।

जाति प्रथा की उत्पत्ति के इन परम्परागत सिद्धान्तों, जिन्हें कि दुर्भाग्य से, अधिकांश हिन्दू मानते हैं, का पता हमें प्राचीन हिन्दू ग्रन्थों, वेदों, उपनिषद तथा महाकाव्यों से चलता है।

वैदिक साहित्य मे जाति प्रथा के सम्बन्ध में, सबसे प्राचीन व्याख्या ऋग्वेद के पुरुष सूक्त के एक सूत्र से मिलती है, इसके अनुसार ब्राह्मण ब्रह्मा के मुख से, क्षत्रिय भुजा से, वैश्य जंघा से तथा शूद्र पैरों से उत्पन्न हुये। इसी आधार पर प्रत्येक जाति के कार्य का निर्धारण हो गया। मुख का कार्य बोलना है, अतः ब्राह्मणों का कार्य पठन पाठन निश्चित हुआ ताकि वेदों की रक्षा हो सके। भुजा शक्ति की द्योतक है, अतः क्षत्रियों का कार्य शक्ति से सम्बन्धित माना गया, जैसे– अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग और प्रशिक्षण, युद्ध कार्य दूसरों के धन और जीवन की रक्षा आदि। इसी प्रकार वैश्यो का कार्य अध्ययन, त्याग, कृषि, व्यापार एवं पशुपालन घोषित किया परन्तु यहा यह नही बताया गया कि जैसे मुख का कार्य बोलने का है, भुजा शक्ति का प्रतीक हैं, वैसे जंघा किस गुण कर्म का प्रतीक है, जिसके आधार पर वैश्य का कार्य निर्धारित हुआ। खैर आगे शूद्र के बारे मे कहा गया है कि पैर सारे शरीर का बोझ ढोते है अतः उनसे उत्पन्न शूद्रों का कार्य, अपने ऊपर के तीनो वर्णों की सेवा करना ही है।

अब आप स्वयं अपनी बुद्धि से विचार करें कि क्या किसी व्यक्ति का जन्म कभी किसी के मुख, भुजा एवं पैरों से हो सकता है कि मेरा तो यह सुनिश्चित मत है कि प्रत्येक व्यक्ति का जन्म प्राकृतिक नियमों के अधीन स्त्री-पुरुष के समागम के बाद, माँ के उदर से ही होता है। फिर क्या यह सिद्धान्त कोरी कल्पना नही है?

यदि थोड़ी देर के लिये यह मान भी लिया जाय कि चारों वर्णों की उत्पत्ति, इस विचित्र ढंग से, ब्रह्मा से हुई है तो यह प्रश्न और भी ज्यादा विचारणीय हो जाता है कि आखिर यह ब्रह्मा कोई वास्तविक तथ्य था या केवल कल्पना मात्र? यदि यह वास्तविक था तो उसकी उत्पत्ति कब और कैसे हुई? यह भी कम विचारणीय तथ्य नहीं है। इस सम्बन्ध मे भी ग्रन्थों में अनेक कहानियां हैं परन्तु

परन्तु जगत की उत्पत्ति के वैज्ञानिक सिद्धान्तों के सामने उन कल्पनाओं का कोई अस्तित्व नहीं है।

इसी तरह की एक और विचित्र कल्पना का उल्लेख महाभारत में किया गया है जिसके अनुसार सर्वप्रथम ब्रह्मा ने ब्राह्मण की सृष्टि की और तब क्रमशः क्षत्रिय, वैश्य व शूद्रों का जन्म हुआ। ब्राह्मण का रंग सफेद (श्वेत) क्षत्रिय का लाल (लोहित) वैश्य का पीला (पीत) और शूद्र का काला (श्याम) था। अर्थात् श्वेत गुण वाले या सत्य प्रधान व्यक्ति ब्राह्मण रहे। भोग, क्रोध तथा वीरता से सम्पन्न लोहित गुण वाले अर्थात् रज प्रधान व्यक्ति, क्षत्रिय बने, कृषि, पशुपालन आदि करने वाले पीत गुण के अर्थात् तमो मिश्रित रज प्रधान व्यक्ति वैश्य तथा असत्य आचरण करने वाले, श्याम वर्ण के अर्थात् तम प्रधान व्यक्ति शूद्र बने।

वर्णों से जातियां कैसे बनी ? इसका उल्लेख महाभारत एवं मनुस्मृति जैसे गन्थो में किया गया है, जिसके अनुसार चारों वर्णों के बीच में अनुलोभ विवाह प्रथा अर्थात् नीचे के वर्ण की कन्या का ऊपर के वर्ण के व्यक्ति के साथ विवाह की प्रथा प्रचलित थी। परन्तु प्रतिलोभ प्रथा अर्थात् नीचे के वर्ण के पुरुष के साथ, ऊपर के वर्ण की कन्या के विवाह की प्रथा, प्रचलित तो थी परन्तु समाज द्वारा उसे मान्यता प्राप्त नहीं थी। अतः इस प्रकार के विवाहो से उत्पन्न सन्तानो के कारण वर्ण व्यवस्था से अनेक जातियो एव उप जातियो का जन्म हुआ।

जाति एव वर्ण की घृणित राजनीति को समझने के साथ-साथ, दलित व्यक्तियों को साम्यवाद के प्रवर्तक कार्ल मार्क्स के भौतिक द्वन्द्ववाद, इतिहास की भौतिक व्याख्या, वर्ग चेतना संघर्ष एवं साम्यवाद के दर्शन को भली प्रकार समझना होगा। मार्क्सवाद को जान व समझकर ही उनमें वर्ग-चेतना, वर्ग संघर्ष एव साम्यवादी समता मूलक जाति विहीन एव वर्ग विहीन समाज की संरचना का सकल्प पैदा हो सकेगा।

मार्क्स का मत है कि जिस वर्ग के हाथो मे उत्पादन के मूल साधन भूमि, कल कारखानों और उत्पादक व्यवस्था आ जाती है वह वर्ग अर्थ सत्ता के बल पर राजनीतिक सत्ता को भी हथिया लेता है। वह साधन-सम्पन्न शोषक वर्ग साधन-विहीन श्रमजीवियो का, भरपूर शोषण करता है। श्रमजीवी मजदूरों को भी वह सम्पदा पैदा करने वाले यन्त्र की तरह उपयोग मे लाता है।

साधन सम्पन्न शोषक पूंजीपति वर्ग अपनी सत्ता एव शक्ति को बनाये

रखने के लिये अपने अनुकूल समाज रचना के लिये धर्म कानून तथा नैतिकता के सिद्धान्तों को गढ़ लेता है।

मार्क्सवाद की रोशनी में यदि हम वर्ण व जाति-व्यवस्था का अवलोकन करें तो पता चलता है कि हिन्दू समाज के सारे धार्मिक, नैतिक एवं कानूनी विधि-विधान सवर्ण सम्पन्न पूंजीपतियों के हितों की रक्षा के लिये गढ़े गये है तथा इन सिद्धान्तों एवं आदर्शों मे आस्था रखते हुये, दलित कभी भी शोषण के कुचक्र से मुक्त नहीं हो सकते है।

अध्याय तीन

दलितों की दयनीय स्थिति

दलितों की दयनीय स्थिति तक पहुंचाने की, पूर्णतया जिम्मेदार, ब्राह्मणों द्वारा अपनाई गई, कूटनीतिक योजना है। ब्राह्मणों ने शिक्षा, संस्कार एवं धर्म का अधिकार अपने पास सुरक्षित रख लिया था। तथा वर्ण व्यवस्था का सृजन कर स्वयं को ब्रह्मा का प्रतिरूप घोषित कर दिया था स्वयं की सत्ता एवं शक्ति को अन्य वर्गों से ऊपर रखने के लिये उन्होने विशेषाधिकार अपने लिये सुरक्षित रख लिये तथा जिन लोगों ने उनके विशेषाधिकारों का विरोध किया उन्हें सदा-सदा के लिये अधिकार च्युत कर शूद्र घोषित कर दिया।

डॉ. अम्बेडकर ने शूद्रों की उत्पत्ति, उनके शोषण की परिस्थितियों एवं कारणों पर बड़ी गहराई से अध्ययन एवं शोध कार्य किया क्योंकि वे शूद्रों एवं दलितों को मानवीय अधिकार दिलाने के लिये संकल्पबद्ध थे। उन्होने अपनी पुस्तकें "शूद्र कौन थे" में इस सम्बन्ध में विस्तार से लिखा है।

डॉ. अम्बेडकर शूद्र को पृथक वर्ण नहीं मानते थे। वे उन्हें मूलतः क्षत्रिय मानते थे। उनका मानना है कि जिन क्षत्रियों ने ब्राह्मण की श्रेष्ठता के अधिकार को चुनौती दी, ब्राह्मणों से सघर्ष किया, उन क्षत्रियों का उपनयन संस्कार करना, ब्राह्मणों ने बन्द कर दिया तथा ऐसे क्षत्रियों को उन्होंने शूद्र घोषित कर दिया। इस तरह ब्राह्मणों की घृणा एवं विद्वेष की भावना ने अस्पृश्यता की दुर्भावना को जन्म दिया।

डॉ. अम्बेडकर ने पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रतिपादित इस मत का समर्थन नही किया है कि आर्यों ने भारत पर आक्रमण किया तथा यहाँ के मूल निवासी द्रविड़ों या दस्युओ को परास्त कर उन्हें शूद्र घोषित कर दिया। वे शूद्रों को आर्यों की ही एक उपजाति मानते है। जो ब्राह्मण क्षत्रिय सघर्ष के परिणामस्वरूप

कालान्तर में शूद्र घोषित कर दिये गये। वे ऋग्वेद के पुरुष सूक्त को प्रमाणिक नहीं मानते वरन् उसे बाद में जोड़ा गया मानते हैं।

डॉ. अम्बेडकर के मतानुसार आरम्भ में मूलत: तीन वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य ही थे। शूद्र वर्ण की उत्पत्ति कालान्तर में ब्राह्मण एवं क्षत्रियों के सत्ता संघर्ष के बाद हुई। उनका यह मत है कि पुरुष सूक्त, ब्राह्मणों ने बाद में स्वयं को अन्य वर्णों से श्रेष्ठ घोषित करने के लिये तथा शूद्रों को निम्न स्तर का करार देने के लिये जोड़ा था।

शूद्रों के इस मान भंग के कारण उनका ब्राह्मणों से हिंसात्मक संघर्ष हुआ। शूद्र राजा सुदास और ब्राह्मण ऋषि वशिष्ट का उदाहरण इस सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर देते हैं। वशिष्ट एवं विश्वामित्र का संघर्ष भी ब्राह्मण व क्षत्रिय संघर्ष का उदाहरण है। परशु राम और जामदग्नि ऋषि का संघर्ष एवं परशुराम द्वारा धरती का क्षत्रिय विहीन बनाना, भी इसी का उदाहरण है।

शूद्रों को चौथा वर्ण बना देने के पश्चात् ब्राह्मणों ने शूद्रों के विरुद्ध जो घातक प्रहार किया वह था, शूद्रों को उपनयन के अधिकार से वंचित करना। इस संघर्ष के पूर्व स्त्री एवं शूद्रों को उपनयन धारण करने का अधिकार था। ऋषि वशिष्ट ने शूद्र राजा सुदास का उपनयन संस्कार किया था और उसका राज्याभिषेक भी किया था इस तथ्य का प्रमाण है।

डॉ. अम्बेडकर ने इस तथ्य को भी प्रमाणित किया है कि ब्राह्मण वर्ग अपनी सर्वोच्च सत्ता बनाये रखने, अपने को पुजवाने के लिये, दान दक्षिणा के अधिकार को सुरक्षित रखने के लिये, पौरोहित्य के एकाधिकार की सुरक्षा हेतु सदैव ऊंच-नीच का भेद करते रहे। छूआछूत और ऊंच-नीच के विचार को उन्होंने इसी दुर्भावना के कारण प्रचारित एवं प्रसारित किया। अपने द्वारा लिखित ग्रन्थों में उन्होंने इन्हीं अमानवीय बातों को सर्वाधिक महत्व भी दिया।

इस सन्दर्भ में वे शिवाजी के राज्याभिषेक की घटना का उल्लेख करते हैं। जब शिवाजी के राज्याभिषेक का समय आया तो ब्राह्मणों ने शिवाजी को शूद्र घोषित कर दिया और राज्याभिषेक करने से इन्कार कर दिया। उन्होंने कहा कि पहले शिवाजी यह सिद्ध करें कि वह क्षत्रिय हैं तभी राज्याभिषेक हो सकेगा। शिवाजी के प्रधान अमात्य मोरोपंत पिंगले एवं अन्य मराठा सरदारों ने भी ब्राह्मणों की बात में आकर शिवाजी को उपनयन एवं राज्याभिषेक के अयोग्य मान

लिया। तब शिवाजी को विवश होकर अपने उपनयन एवं राज्याभिषेक के संस्कार के लिए बनारस के गंगभट्ट नामक वैदज्ञ को नियोजित करना पड़ा क्योंकि महाराष्ट्र का कोई ब्राह्मण उनके राज्याभिषेक के लिए तैयार नहीं था। अपने राज्याभिषेक तथा उपनयन संस्कार के लिए उस समय शिवाजी को चार करोड़ छब्बीस लाख रुपये की राशि व्यय करनी पड़ी। एक लाख तो गंगभट्ट को ही दक्षिणा में देने पड़े थे। इतनी ही भेंट अपने ब्राह्मण अमात्य मोरो पंत पिंगुले को देनी पड़ी थी। इस व्यय के कारण शिवाजी क्षत्रिय मान लिये गये किन्तु उनके पुत्र शम्भाजी और पौत्र साहू को ब्राह्मण समुदाय ने क्षत्रिय नहीं माना व शूद्र माना। उनके वंशजकोल्हा-पुर नरेशों को ब्राह्मण वर्ग शूद्र ही मानता रहा। इन घटनाओं से यह साबित होता है। ब्राह्मण स्वयं को किसी भी हिन्दू को किसी भी समय सामाजिक स्थिति प्रदान करने या किसी भी सामाजिक स्थिति से गिराने का अधिकारी मानता रहा एवं अपने इस अधिकार का अपने हित में प्रयोग करता रहा।

ब्राह्मणों के विशेषाधिकार—क्योंकि ब्राह्मणों ने ज्ञान देने, पुस्तकें लिखने का सर्वाधिकार अपने पास रख लिया था इसलिये उन्होंने अपने द्वारा लिखित ग्रन्थों में अपने लिए निम्नांकित विशेषाधिकारों की सृजना कर ली थी :—

(1) ब्राह्मण को अपने जन्म से सभी वर्णों का गुरु माना जाना चाहिये।

(2) ब्राह्मणों को अन्य वर्णों के कर्त्तव्य निर्धारित करने का सम्पूर्ण अधिकार है इनके लिए क्या आचरण उचित है और उनकी जीविका के क्या साधन हों। अन्य वर्ण उनके निर्देशों से बाध्य होते थे और राजा उनके निर्देशों के अनुसार शासन करता था।

(3) ब्राह्मण राजा के प्राधिकार में नहीं था। ब्राह्मणों के अतिरिक्त राजा सभी का शासक था।

(4) ब्राह्मण (वेद–विद्) कर मुक्त हैं।

(5) ब्राह्मण कोड़े लगाने, बेड़िया डालने, अर्थ दण्ड, देशनिकाला, पर निन्दा और बहिष्कार आदि दण्डों से मुक्त हैं।

(6) यदि ब्राह्मण को धन गढ़ा मिले तो वह सम्पूर्ण धन का वह अधिकारी है। यदि राजा को गढ़ा धन मिले तो उसे आधा धन ब्राह्मण को दे देना चाहिये।

(7) ब्राह्मणों की सम्पत्ति, यदि उनका कोई उत्तराधिकारी नहीं होगा तो मृत्यु पश्चात् राजा के पास नहीं जायगी वरन् उसे ब्राह्मणों अथवा क्षत्रियों के बीच वितरित कर दिया जायगा।

(8) यदि राजा को मार्ग में ब्राह्मण मिलता है तो राजा ब्राह्मण को रास्ता देगा।

(9) पहले ब्राह्मण को नमस्कार किया जाना चाहिये।

(10) ब्राह्मण जन्म से ही पवित्र व्यक्ति है। ब्राह्मण को हत्या का अपराध होने पर दण्ड नहीं दिया जा सकता।

(11) ब्राह्मण को आक्रमण करके डराना, आघात पहुंचाना, ब्राह्मण के शरीर से रक्त निकालना भयंकर अपराध है।'

(12) किसी अपराध के लिए ब्राह्मण को अन्य वर्णों की तुलना में बहुत कम सजा दी जानी चाहिये।

(13) राजा को साक्षी के रूप में ब्राह्मण को तब तक नहीं बुलाना चाहिये जब तक कि विवादी ब्राह्मण न हो।

(14) यदि कोई ब्राह्मण ऐसी औरत से शादी करता है जिसके दस पूर्व पति थे तो वह अकेला ही उसका पति माना जायेगा, राजन्य या वैश्य नहीं, जिनसे उसने शादी की थी।

डा. के. पी. काणे कहते हैं कि—

"ब्राह्मणों को प्राप्त अन्य विशेषाधिकार थे—भीख मांगने के उद्देश्य से अन्य लोगों के घरों में मुक्त प्रवेश, ईंधन फूल, पानी को एकत्रित करने का अधिकार जिसे चोरी के रूप में कभी नहीं माना जाता था। बिना किसी भर्त्सना के अन्य लोगों की स्त्री से बातचीत करना, नाव वाले को बिना कोई भाडा दिये अन्य व्यक्तियों से पहले नदी पार करने का अधिकार था। व्यापार करने की स्थिति में नाव का उपयोग करने में उन्हें कोई कर नहीं देना होता था। ब्राह्मण यात्री यदि थक जाय और भूखा हो तो दो गन्ने या शकरकन्दी कहीं से भी ले सकेगा। ये अपराध नहीं माना जायेगा।"

उपरोक्त विशेषाधिकारों के अतिरिक्त हिन्दू समाज व्यवस्था में जन्म लेने वाले हर व्यक्ति पर अंकुश बनाये रखने के लिए जन्म से लेकर मृत्यु तक और मृत्यु

के बाद तक अनेक संस्कारों की सृजना की गई जिससे कि व्यक्ति के जीवन पर पूरा हस्तक्षेप और नियन्त्रण रखा जा सके। जन्म, नामकरण शिक्षा प्रारम्भ/उपनयन, विवाह मृत्यु और पिण्डदान जैसे जीवन के सभी महत्वपूर्ण अवसरों पर ब्राह्मण की उपस्थिति और उनको दक्षिणा दिये जाने का विधान सुनिश्चित किया। पूजा पाठ, यज्ञ; एवम् कथावाचन का अधिकार अपने हाथ में रख कर ब्राह्मणो ने अपनी आजीविका को सुरक्षित किया और निरन्तर जनता की आय के स्रोत से जुड़े रहे। ब्राह्मणों के खुश किये जाने पर उनके द्वारा दिये जाने वाले वरदानो और कुपित होकर दिए जाने वाले अभिशापों की कथायें गढकर, लोगों को नर्क का भय और स्वर्ग का प्रलोभन देकर उनका मनमाने ढंग से शोषण किया।

शूद्रों पर लादी गई निर्योग्यतायें—ब्राह्मण विधि निर्माताओं ने अपने लिए तो बहुत सारे विशेषाधिकार अर्जित किए ही साथ मे शोषित, शूद्र, दलित एवम् साधन विहीन श्रमजीवी उनके विरुद्ध कभी विद्रोह ही नही कर सके। इसके लिये उन्होंने शूद्र वर्ग पर निम्नलिखित निर्योग्यतायें भी लाद दी—

(1) शूद्रों का सामाजिक क्रमों में अन्तिम स्थान निर्धारित था।

(2) शूद्र अपवित्र माने गये। इसलिए किसी भी पवित्र कार्य को देखने या सुनने का अधिकार उन्हें नही था।

(3) शूद्रों को अन्य वर्णों की तरह सम्मान नही दिया जाना चाहिये।

(4) शूद्रों के जीवन का कोई मूल्य नही है। कोई भी व्यक्ति बिना कोई क्षति-पूर्ति दिए उन्हें मार सकता है। क्षति पूर्ति यदि देनी भी पड़े तो ब्राह्मण, क्षत्रिय एवम् वैश्य की तुलना में बहुत कम हो।

(5) शूद्रों को ज्ञानार्जन नही करना चाहिये। शूद्रों को शिक्षा देना पाप और अपराध है।

(6) शूद्र को सम्पत्ति अर्जित करने का अधिकार नही है। ब्राह्मण उसकी कोई भी सम्पत्ति अपने आनन्द के लिए जबरदस्ती ले सकता है।

(7) शूद्र राज्य के अधीन कोई पद धारण नही कर सकता।

(8) शूद्रों के कर्त्तव्य और मुक्ति उच्च वर्णों की सेवा मे निहित है।

(9) उच्च वर्णों से शूद्रों को अन्तर्जातीय विवाह नही करना चाहिए। उच्च

वर्ण को एक शूद्र स्त्री को रखेल रखने का अधिकार था किन्तु यदि शूद्र किसी ऊपर वर्ण की स्त्री को छू भी ले तो उसे कठोर दण्ड दिया जाय।

शूद्रों को इतनी वर्जनाओं एवं निर्योग्यताओं के अधीन गुलामी की जिन्दगी बिताने को ब्राह्मणों ने विवश ही नहीं किया बल्कि छूने तक को पाप एवं अधर्म की संज्ञा दी जिसके लिए उन्होंने कठोर नियमों की सृजना की जैसे कि—

शूद्र गांव से बाहर रहे, अपनी पहिचान के लिए विशेष रंग के वस्त्र पहने, कोई ऊँची जाति का व्यक्ति आता दिखाई दे तो स्वयं को छुपा लें या एक तरफ हाथ जोड़कर झुक कर खड़ा हो जाय। कई सार्वजनिक रास्तों पर तो इनको चलने का अधिकार ही नहीं था। उसे राह चलते आवाज लगानी पड़ती थी कि चण्डाल हूं। जहाँ वेद पाठ, यज्ञ आदि होते थे वहाँ शूद्र नहीं जाया करते थे। पवित्र ब्राह्मण अपनी पवित्रता की रक्षा के लिये शूद्र की छाया तक से बचते थे। नदी में स्नान उसे जल बहाव के नीचे की तरफ करना होता था। वह ऊँचे आसन पर नहीं बैठ सकता था। ऊँची जाति के व्यक्ति को देखकर उसे हाथ जोड़ कर झुक कर खड़ा होना पड़ता था। ऐसा नहीं करना ऊँची जाति के व्यक्ति का अपमान माना जाता था। जिसके लिए उसे मारा पीटा जा सकता था। इन निर्योग्यताओं के कारण शूद्र अपनी स्वयं की, अपने स्त्रियों व बच्चों की, तथा अपनी सम्पत्ति की रक्षा करने में भी असमर्थ था। सारा धर्म और सारे कानून एवं राज्य की व्यवस्था शूद्र के विपरीत थी।

अस्पृश्यता का प्रचलन ऋग्वेद काल तक नहीं था यू. एन. घोषाल के मतानुसार—

"हमने देखा है कि ऋग्वेद से कोटिल्य तक दासों को अछूत नहीं माना गया था। उद्धरणों से यह भी पता चलता है कि उन्हें गुलाम भी नहीं माना गया था।"

डा. अम्बेडकर इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि—

"इस प्रकार हम विश्वास पूर्वक कह सकते है कि अस्पृश्यता 400 ई. के आस पास आरम्भ हुई। इसका जन्म बौद्ध मत एवं ब्राह्मण वाद के सर्वोत्तम सम्बन्धी संघर्ष की कोख से हुआ, जिसने भारतीय इतिहास को एक गम्भीर मोड़ दे दिया।"

वर्ण व्यवस्था के कड़े प्रतिबन्धों के बावजूद अन्तर्जातीय स्त्री पुरुष-सम्बन्धों को कोई नहीं रोक सका। अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह द्वारा वर्जित जातियों

के स्त्री पुरुषों के समागम के परिणामस्वरूप वर्ण व्यवस्था विखण्डित होती चली गई और जाति व्यवस्था का जन्म हो गया।

डा. अम्बेडकर ने भारतीय समाज व्यवस्था पर जाति व्यवस्था के दुष्प्रभावों को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि—

"जाति प्रथा ने प्रदूषण के बुरे विचारों को प्रारम्भ किया है जो अब तक हिन्दू समाज का प्लेग बना हुआ है। हिन्दू धर्म के भेद केवल सामाजिक ही नहीं वरण धार्मिक प्रतिष्ठा का परिचायक भी है। जाति किसी हिन्दू के धार्मिक एव सामाजिक स्थिति की परिचायक है। कोई इस कारण हिन्दू नहीं है क्योंकि वह भारतवासी या किसी जाति विशेष या राष्ट्रीयता से सम्बद्ध है। वरन् इसलिए हिन्दू है क्योंकि वह ब्राह्मणवाद के घेरे में है। कोई भी जन्म से ही क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र है। ऐसा कहा जाता है कि इन तीन वर्णों का कोई भी व्यक्ति ब्राह्मण की स्थिति पाने में अक्षम है।"

डा. अम्बेडकर ने ब्राह्मणों के दर्शन को "दमन की तकनीक" कहा है। उन्होंने इसका कारण ब्राह्मणवाद के छः प्रमुख सिद्धान्तों को माना है।

(1) विभिन्न वर्गों के बीच क्रमिक असमानता।

(2) शूद्रों एवं अछूतों को पूर्ण निरस्त्रीकरण।

(3) शूद्रों एवं अछूतों का शिक्षा पर पूर्ण प्रतिबन्ध।

(4) शक्ति एवम् प्राधिकार के स्थानों से शूद्रों एवं अछूतों का पूर्ण बहिष्कार।

(5) शूद्रों एवं अछूतों द्वारा सम्पत्ति अर्जन पर पूर्ण निषेध।

(6) औरतों का पूर्ण अधीनीकरण एवं दमन।

इस प्रकार असमानता ब्राह्मणों का अविकृत सिद्धान्त हो गया और निम्न वर्णों का दमन उनका कर्तव्य समझा गया। छुआ-छूत केवल सामाजिक, धार्मिक पद्धति ही नहीं थी वरन् आर्थिक पद्धति थी जो गुलामी से भी खराब थी।

1931 की जनगणना में पांच ऐसी भयंकर निर्योग्यताओं का उल्लेख है जो अछूतों को अपने मूलभूत अधिकारों से भी वंचित करती थी जो निम्न प्रकार थीं—

(1) सार्वजनिक संस्थाओं या सुख सुविधाओं की संस्थाओं जैसे विद्यालय, कुओं या स्नान करने के स्थान पर प्रतिबन्ध।

(2) हिन्दू मन्दिर या कुछ मामलों में शमशानघाट के उपयोग पर प्रवेश निषेध।

(3) जाति आधार पर नाइयों, दर्जियों या धोबियों द्वारा उनकी सेवायें करने में इनकार करना।

(4) उनसे पानी लेने से इन्कार करना।

(5) सम्पर्क या सानिध्य द्वारा प्रदूषण के विचार के कारण अवमानना।

इस तरह से ब्राह्मणों की चतुर राजनैतिक योजना के अन्तर्गत पहले वर्ण व्यवस्था फिर जाति व्यवस्था और अन्त में अस्पृश्यता की घृणित व्यवस्था जन्मी, पनपी और आज भी मौजूद है।

मुस्लिम आक्रमण से पूर्व अर्थात् चौथी शताब्दी से लेकर दसवी शताब्दी तक ब्राह्मणों का वर्चस्व हिन्दू समाज व्यवस्था, राजनीति एवम् अर्थ व्यवस्था पर रहा। मौर्य काल में चाणक्य और गुप्तकाल के पश्चात् पातजंली ने राज व्यवस्था व समाज व्यवस्था को आधार सहितायें प्रदान की थी उसके परिणामस्वरूप दलित समाज की स्थिति बद से बदतर होती चली गई और उन्हें पूरी तरह धीरे-धीरे अधिकार विहीन, अशिक्षित, साधन विहिन, शोषित एवम् प्रताडित वर्ग बना दिया।

सामन्त वर्ग अपने दुर्ग, मकान एवम् सडकें आदि बनाने के लिए उनसे बेगार लेने लगे। यहाँ तक कि अपनी व्यक्तिगत खेती एवम् उद्योग भी बिना पारिश्रमिक चुकाये बेगार से चलाने लगे। बेगार की नारकीय प्रथा ने दलितों के मनोबल को तोडकर रख दिया। इसके अलावा भाग्यवाद, ईश्वरवाद एवम् कर्मफल की धारणाओं का प्रचार कर दलितों का मानसिक दोहन कर उनके दिमाग में यह बात बिठा दी कि निम्न जाति में जन्म लेना तुम्हारे भाग्य का खेल है या तुम्हारे द्वारा किए गये पापों का फल। यह तो ईश्वर द्वारा बनाया गया विधान है इसे नहीं मिटाया जा सकता।

मुसलमानों के आक्रमणों ने सबसे बड़ा आघात ब्राह्मणी सर्वोच्च धारणाओं को, उनकी जीवन शैली एवं गर्व को पहुँचाया। दलितों की भी आँखें खुली। धर्मान्तरण की प्रक्रिया भी आरम्भ हुई। यह सिद्ध होने लगा कि मनुष्य स्वतन्त्र है, अपनी आस्था के अनुसार धर्म परिवर्तन के लिये। मुसलमानों के समता एवं न्याय के सिद्धान्तों ने दलितों को अपनी ओर आकर्षित किया। उसी काल में रविदास, कबीर और नानक जैसे महान् क्रान्तिकारी साधकों ने मनुष्य मात्र की समानता

का उद्घोष किया। उन्होंने कहा कि सभी मनुष्य ईश्वर के बन्दे हैं और उसकी नजर में बराबर हैं। इतना सब होते हुए भी समाज में कोई क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं हो सका। ऊँच-नीच एवं अस्पृश्यता का व्यवहार चलता रहा। दलितों का शोषण भी चलता रहा। धर्मान्तरण की प्रक्रिया भी चलती रही। जिससे जिन लोगों ने धर्म परिवर्तन कर लिया उन्हें समानता का दर्जा मिला। उनकी स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन आये। उन्होंने मुस्लिम सेनाओं में भर्ती होकर युद्ध भी किये।

ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना को चाहे कोई किसी भी दृष्टि से देखे परन्तु जहा तक शूद्रों अछूतो या दलितों का प्रश्न है, ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना उनके लिये वरदान सिद्ध हुई है। जब अंग्रेजों ने अपने होटलों की तख्तियों पर लिखा था। भारतीय एवम् कुत्ते यहां नही आ सकते। तो इस देश के महाप्रभुओं की सर्वोच्च धारणाओं को जबरदस्त धक्का लगा, दलितो को भी यह पता चला कि अपने आपको ईश्वर का प्रतिरूप समझने वाले लोगों का भी अंग्रेजों की नजर मे वही स्थान था जो उनका स्वयं का था। इनका जोर तो केवल दलितों को सताने के लिये ही था। शक्तिशाली ब्रिटिश हुकूमत के सामने ये कितने विवश हो गये थे।

अंग्रेजो की घृणा का शिकार जितना दलित भारतीय था उतना ही ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य था। इसके अलावा ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना से अंग्रेजी शिक्षा के साथ प्रजातन्त्र, स्वतन्त्रता, समानता और बनधुत्व के उदारवादी आन्दोलन की हवा भी घुस आई। लोगो ने फ्रांस और अमेरिका की क्रान्तियो को पढकर, सुनकर ये जाना कि भूखी नंगी जनता क्रान्ति लाकर बड़े-बड़े तानाशाहों को भी हटा देती है। दूर संचार एवं यातायात के साधनों मे, शिक्षा के खुलते द्वारों मे, दलितो को जागृत होने एवम् संगठित होकर संघर्ष करने की पृष्ठभूमि प्रदान की। डॉ आम्बेडकर के पिता यदि ब्रिटिश फौज में नही होते तो उन्हें पढ़ने का अवसर नही मिला होता और यदि ऐसा होता तो हमे अपना उद्धारक क्रान्तिकारी नेता नही मिलता।

डॉ. अम्बेडकर ने ही सबसे पहले दलितो को नागरिक अधिकार दिलाने के प्रयास किये। ब्रिटिश सरकार एवं दुनियां के मंच तक दलितो की आवाज को बुलन्द किया। नया संविधान रचकर अनुच्छेद मत्र 9 द्वारा सदियों से चली आ रही अस्पृश्यता का अन्त कर, उसे कानून अपराध की संज्ञा दी। दलितो के, अन्य भारतीय नागरिको के समान, मौलिक अधिकारो की व्यवस्था की। उनके राजनैतिक प्रतिनिधित्व, सरकारी सेवाओ मे आरक्षण एवम् शिक्षा और विकास की

विशेष व्यवस्थाएँ कर उन्होंने भारत में सामाजिक, राजनैतिक एवम् आर्थिक क्रान्ति का सूत्रपात किया।

आजादी के बाद दलितों में जागृति आई है। उनमें शिक्षा का भी प्रचुर मात्रा में प्रचार एवम् प्रसार हो रहा है। उनमें अधिकार बोध जागृत हुआ है। इसी का परिणाम है कि आज देश की राजनीति, प्रशासन, अर्थव्यवस्था एवम् विधायिका में इन वर्गों का प्रतिनिधित्व दिनों-दिन बढ़ रहा है।

परन्तु अभी भी गावों में दलित अधिकारों से वंचित है, साधनों से विहीन है। एवम् सामाजिक प्रतिष्ठा में नीचे के स्तर पर हैं।

दलितों को अपने सम्पूर्ण संगी-साथियों को, सामाजिक प्रतिष्ठा, न्याय एवं अवसर की समानता, आर्थिक आत्म निर्भरता एवम् राजनीतिक शक्ति, तक पहुँचाने के लिये जाति विहीन एवम् वर्गविहीन समता मूलक समाज की संरचना के लिए डॉ. अम्बेडकर के मार्ग दर्शन पर, संगठित होकर जबरदस्त संघर्ष करना होगा। तभी उनका विकास व राष्ट्र का निर्माण होगा।

अध्याय चार

दलित क्रान्ति का उद्भव एवं विकास

दलित क्रान्ति के उद्भव एवं विकास पर डॉ. श्रीमती कुसुम मेघवाल ने अपने शोध प्रबन्ध "हिन्दी उपन्यासों में दलित वर्ग" में बड़े ही सार गर्भित ढंग से प्रकाश डाला है। डॉ. श्रीमती कुसुम मेघवाल दलित जागरण के महान् अभियान में बड़े साहस एवं बुद्धिमत्ता से निरन्तर प्रयासरत हैं। अतः इस सन्दर्भ में उनके विचारों को प्रेषित किया जाना, इस पुस्तक की विषयवस्तु की गरिमा को, बढ़ायेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

उन्होंने अपने शोध प्रबन्ध में लिखा है कि:—

"भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जाति की न केवल भूमिका महत्वपूर्ण है बल्कि निर्णायक भी है। भारतीय समाज मे व्यक्ति की प्रतिष्ठा और हैसियत उसकी जाति पर निर्भर करती है।

हिन्दू समाज मूल रूप से ब्राह्मण वर्ग द्वारा नियन्त्रित समाज है। कई धार्मिक नेताओं और समाज सुधारकों ने जाति की कठोरता और जटिलताओं को बदलने और सुधारने की चेष्टा की पर उन्हे अधिक सफलता नहीं मिली। आज भी वैसा ही सामाजिक भेदभाव और आर्थिक विषमता है जो शताब्दियों पूर्व थी। आज सबसे अधिक कष्ट तो शूद्रों को हो रहा है। ये लोग पशुओं सा जीवन व्यतीत करने पर विवश है। संसार के इतिहास में कोई ऐसा उदाहरण नही मिलेगा जहां मानवों को इतना अधिक गिरा दिया गया हो और उनसे क्रूरतापूर्ण अमानवीय व्यवहार किया जाता हो। हिन्दू समाज मे एक ही धर्म के मानने वालों में, अपने साथियों के प्रति भेदभाव और अन्याय से काम लिया जाता है। भारतीय समाज मे इससे अधिक लज्जा जनक और कोई बात नही।

अनुसूचित जातियों और जन जातियों के कुछ शिक्षित व्यक्तियों द्वारा

अंग्रेजों के साथ काम करते समय तनिक ज्ञान प्राप्त करके कुछ क्षेत्रों में अपने बच्चों की शिक्षा और जन जातियों में ईसाई मिशनरियों द्वारा शिक्षा के प्रसार के प्रयत्नों के परिणाम-स्वरूप इन जातियों की मुक्ति का आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। इन जातियों की दुर्दशा की ओर राष्ट्रीय नेताओं का ध्यान भी गया।

समाज सुधार के लिए समय पर महापुरुषों द्वारा प्रयत्न किये गये है। छूआ छूत व ऊँच-नीच को मिटाने के लिये महान् विभुतियो ने संघबद्ध होकर कार्य प्रारम्भ किये है।

धार्मिक प्रयास : भारतीय समाज धार्मिक एव शास्त्रीय आस्थाओं से नियन्त्रित रहा है दलितों को अपने मानवीय अधिकार दिलाने तथा समता का उद्घोष करने का कार्य भी सर्वप्रथम धर्म के माध्यम से ही हुआ।

बौद्ध व जैन मत : भगवान बुद्ध पहले महान् सामाजिक क्रान्तिकारी थे जिन्होने ब्राह्मणो के वर्चस्व को कुछ समय तक चुनौती देने मे सफलता प्राप्त की। उन्होने सीधे-साधे धर्म की शिक्षा दी जिसमें आचरण की शुद्धता पर बल दिया गया। इस क्रान्तिकारी विचारधारा को बनाये रखने के लिये एक मजबूत सगठन की आवश्यकता थी जो नहीं था। इसलिये ब्राह्मण फिर अपना वर्चस्व स्थापित करने मे सफल हो गये। कुछ सीमा तक इसका कारण यह था कि ब्राह्मणो ने बुद्ध के सिद्धान्तो को हिन्दू धर्म में मिला लिया और आचरण की शुद्धता पर जोर देने लगे। उन्होंने भगवान बुद्ध को अपनी देवमाला मे ऊँचा स्थान प्रदान किया।

महात्मा बुद्ध ही पहली विभूति थे जिन्होंने अपने मत द्वारा छूआछूत और ऊँच-नीच के विरुद्ध जेहाद छेड़ा। उनके धर्म मे वैश्या, आम्रपाली, दस्यु अगुलीमाल की तरह किसी भी दीन दलित और मानव मात्र के लिये स्थान था। वे मानव मात्र में कोई भेद नही मानते थे। वैदिक कर्मकाण्ड और ब्राह्मणों द्वारा अपने आपको सर्वोच्च बनाये रखने के दुरभिसन्धि के विरुद्ध धर्म का प्रथम विद्रोह था।

महावीर स्वामी बुद्ध के समकालीन जैन मत के चौबीसवें तीर्थंकर थे। उनके मत मे मनुष्य मात्र को समता की दृष्टि से देखने का दिव्यत्व है। उनका मत एक मद बयार की तरह चला जबकि बौद्ध मत एक आंधी की तरह भारत मे आया और अल्पकाल मे ही आंधी के लोटने की तरह लुप्त हो गया। जैन मत की मन्द बयार आज भी बह रही है। वस्तुतः छूआछूत और ऊँच-नीच के विरोध मे उठने वाली पहली आवाजें हैं।

भक्ति आन्दोलन : सन्त कबीर, तुकाराम, रैदास, चैतन्य महाप्रभु आदि ने ऊँच-नीच और छूआछूत का विरोध किया। इन सन्तों ने अपनी वाणी द्वारा मानव समता का उद्‌घोष किया। छूआछूत और ऊँच-नीच के विरोध में यह वाणी दलित वर्ग का सम्बल बनी। सन्त कबीर के प्रयास इस दिशा मे विशेष ही प्रखर रहे। उन्होने कबीर पंथ चलाया जिसमें समता के साथ-साथमस्कार निर्माण पर भी ध्यान दिया जाता था।

कबीर की वाणी मे तलवार की धार जैसा पैनापन था, जिसके प्रहार से परम्परावादी हिन्दू समाज का तिलमिला जाना स्वाभाविक था—

'तू ब्राह्मण मै काशी का जुलाहा बुझ हूं मोर गियान जैसे स्वर में बात करना उस समय कबीर का ही साहस था।

सन्त रैदास ने अपने आचरण और वाणी दोनों से ऊँच-नीच व जाति भेद की निस्सारता को प्रतिपादित किया।

"जात पांत पूछे नही कोई"
हरि को भजे सो हरि का होई"

सन्त रामानन्द, रैदास, कबीर, तुकाराम, पीपा आदि मानव मात्र की समता के पक्षधर थे। इनके शिष्यो की सख्या हजारों में थी।

देशव्यापी भक्ति आन्दोलन की प्रमुख विशेषता रही है ऊँच-नीच के भेद-भाव का विरोध और मनुष्य मनुष्य की समानता की घोषणा। संस्कृत का माध्यम छोड़ कर जब लोक भाषा में साहित्य रचा जाने लगा तब संस्कृति पर से, ब्राह्मणों का एकाधिकार भी समाप्त हो गया। संस्कृत में शूद्र कवियों की संख्या नगण्य है तो हिन्दी, मराठी, तमिल आदि भाषाओ मे ऐसे अनेक कवि अग्रगण्य है। ये सन्त कहलाये और उच्च वर्णों द्वारा पूजे गये। रैदास के कुटुम्ब के लोग मुर्दा जानवर ढोते थे किन्तु अपनी साधना के बल पर वह आचरणवान विप्रों द्वारा पूजे गये—

"जाके कुटुम्ब सब ढोर ढोवत फिर ही अजहूँ बनारसी आसपासा।
आचार सहित विप्रह करहीं दण्ड उति तिने रविदास दासानुदासा॥"

सन्तो की वाणी का भारतीय जनमानस पर गहरा प्रभाव पड़ा। मेवाड़ राजवंश से सम्बन्धित कुल वधू राज रानी मीरा ने अपना गुरु रैदास को बनाया। मीरा ने अपने पदो मे स्वयं स्वीकार किया है—"मीरा ने गोविन्द मिलिया गुरु

मिलिया रैदास'' अर्थात् रैदास को गुरु बनाने के परिणामस्वरूप उन्हें गोविन्द अर्थात् श्री कृष्ण की प्राप्ति हुई।

ब्रह्म समाज—ब्रह्म समाज 19वीं सदी के सुधारों की पहली कड़ी थी इसकी स्थापना 1823 में राजा राममोहन राय ने की। वह प्रथम भारतवासी थे जिन्होंने भारत में सुधारवादी आन्दोलन का सूत्रपात किया। ब्रह्म समाज ने अनेक सामाजिक कुरीतियों को उखाड़ फेंकने का बीड़ा उठाया था। इसने प्रचलित छुआछूत का प्रबल विरोध किया तथा समता के सिद्धान्त का प्रतिपादन करके लाखों व्यक्तियों को ईसाई धर्म अपनाने से रोका, अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन किया एवं हिन्दू समाज की सामाजिक कुरीतियों पर कठोर प्रहार करते हुए उसमें नव चेतना का शंख फूंका।

प्रार्थना समाज—ब्रह्म समाज के प्रभाव से सन् 1867 में महाराष्ट्र में प्रार्थना समाज की स्थापना हुई। इसके प्रमुख सदस्यों में श्री महादेव गोविन्द रानाडे सर आर. जी. भण्डारकर तथा नारायण चन्द्रावरकर थे। इस आन्दोलन को आध्यात्मिक नेतृत्व महोदय गोविन्द रानाडे ने प्रदान किया और उन्हीं के कारण इसने सफलता भी प्राप्त की। श्री रानाडे ने अपना सम्पूर्ण जीवन प्रार्थना समाज के उद्देश्यों को आगे बढ़ाने में लगाया।

प्रार्थना समाज द्वारा दलित वर्ग के उत्थान एवं छुआछूत के निवारण हेतु अनेक प्रयास किए गये। जाति प्रथा का अन्त करने के लिए प्रार्थना समाज के समर्थकों ने अथक प्रयास किये। प्रार्थना समाज के समर्थकों द्वारा ''दलित वर्ग मिशन'' नामक संस्था की स्थापना भी की गई जिसका उद्देश्य विशुद्ध रूप से दलित वर्ग के उत्थान हेतु कार्य करना था।

आर्य समाज—हिन्दू जाति की सामाजिक दशा सुधारने के लिए 19 वीं शताब्दी में जिन आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ, उनमें आर्य समाज का महत्व सर्वो-परि है। इसकी स्थापना महर्षि दयानन्द (1824—1883) ने सन् 1875 में की थी।

काठियावाड़ गुजरात के एक सम्पन्न परिवार में जन्मे दयानन्द का वास्त-विक नाम मूलशंकर था। बचपन से ही अत्यन्त गम्भीर प्रकृति के इस युवक ने 1846 में घरबार का त्याग किया और अपना सारा जीवन देश और धर्म की सेवा में लगाने का निश्चय किया। 15 वर्षों तक वे ज्ञान की खोज में सम्पूर्ण भारत में

घूमते रहे। अन्त में मथुरा में उन्हें स्वामी विरजानन्द सरस्वती से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिला। अपने इसी गुरु से इन्होंने निर्भयता का पाठ पढ़ा।

स्वामी दयानन्द ने ऊँच-नीच, छुआ-छूत को सैद्धान्तिक और शास्त्रीय आधार पर अमानवीय घोषित किया। उन्होने वेदों को आधार मानकर इस तथ्य को प्रमाणित किया कि जाति का आधार जन्म नही, कर्म है तथा शूद्र के लिए वेदों का पठन-पाठन निषिद्ध नही है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा आर्य समाज की स्थापना के साथ ही हिन्दू समाज मे सदियों में पनपी विसंगतियों को दूर करने का एक प्रबल आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। स्त्रियों और शूद्रों को उनके मानवीय अधिकार पुनः दिलाना इस संस्था के प्रमुख उद्देश्यों मे सम्मिलित था। आर्य समाज ने इस दशा में जो कार्य किए वे अभूतपूर्व थे। आज भी यह संस्था इस दिशा में कार्य कर रही है।

पं. गंगाराम ने आर्य समाज के माध्यम से दलितोद्धार के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया। ओड जाति के लोगों के आचार-विचार हिन्दू-मुस्लिमों से मिलते थे। पण्डितजी ने इन्हें विधिपूर्वक शुद्ध करके गायत्री का उपदेश दिया और यज्ञोपवीत धारण करना सिखाया। गांव में तो यह कार्य छोटे पैमाने पर हो गया पर बड़े पैमाने के शुद्धिकरण के आयोजन में अनेक बाधायें आई। सन् 1888 में बदायु जिले के गंवर नामक गांव मे इसी प्रकार की शुद्धि का समाचार मिलता है।

आर्य समाज द्वारा दलितोद्धार का उल्लेखनीय उदाहरण जालन्धर आर्य समाज में रहतियों की शुद्धि प्रस्ताव से सम्बन्धित है। इससे पूर्व सन् 1893 मे सीमित पैमाने पर गुरुदासपुर में रहतियों की शुद्धि की जा चुकी थी। सामूहिक शुद्धि का वर्णन हम चमूपति द्वारा लिखित आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के इतिहास से उद्धृत करते है :—

"लाला मुन्शीराम ने आर्य समाज की 3 मार्च 1899 की अन्तरंग सभा में लाला बदरीदास के अनुमोदन से रहतियो की शुद्धि का प्रस्ताव उपस्थित किया। रहतिया मन्तव्य की दृष्टि से सिख थे और कपड़े बुनने का कार्य करते थे। हिन्दू तो हिन्दू स्वयं सिख भी उनसे अस्पृश्यता का व्यवहार करते थे। समाज की अंतरग सभा ने यह विषय प्रतिनिधि सभा मे भेज दिया। उसके पश्चात् 22 अगस्त को समाज की हो अन्तरंग सभा मे यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया परन्तु

6 अक्टूबर को साधारण सभा ने रहतियों को आर्य सभासद बनाने तथा उनके साथ खुला खान-पान करने में असमर्थता प्रकट की। केवल फर्श पर बैठने, कुओं पर पानी भरने तथा उत्सव में सम्मिलित होने को ही स्वतन्त्रता दी। 23 अप्रैल 1900 को लगभग सौ रहतियों की शुद्धि का प्रस्ताव हुआ परन्तु बहुपक्ष ने इसे गिरा दिया। यहां से निराश होकर लाला मुन्शीराम चालीस के लगभग रहतियों को लाहोर ले गये। यहां के आर्य समाज सामान्यतः लाहोर के बाहर के होते थे। उन पर कोई बिरादरी का बन्धन नहीं था। उन्होंने शुद्धि का प्रबन्ध करना स्वीकार कर लिया। सिख भाईयों को अवसर दिया गया कि वे चाहें तो रहतियों को अपने साथ मिला लें। परन्तु वे इसमें असमर्थ थे। अन्त में 3 जून 1900 को क्षौर करा कर रहतियों का वह समूह का समूह आर्य बना लिया गया। लाहोर आर्य समाज का वह दृश्य देखने योग्य था।

इसके बाद पंजाब में लायलपुर, रोपड़, जालन्धर, लुधियाना आदि स्थानों पर रहतियों की शुद्धि बराबर होती रही औडों के समान ये जाति भी अस्पृश्यों में गिनी जाती थी। यह जाति स्यालकोट, गुरुदासपुर तथा गुजरात एवं जम्मू कश्मीर रियासत में बसती है। सन् 1921 की जनगणना में इनकी संख्या 3 लाख बताई गई है। मेघ लोग अन्य अस्पृश्य वर्गों सांसियों, चूहों, चमारों आदि में पुरोहित का कार्य करते थे। लेकिन फिर भी मंदिरों से धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक सभी प्रकार के अधिकारों से वंचित थे। उनके स्पर्श मात्र को ही अपवित्रता समझी जाती थी। 14 मार्च 1903 को स्यालकोट आर्य समाज की अन्तरंग सभा में यह निश्चय हो गया कि 29 मार्च के वार्षिक उत्सव के समय शुद्धि का कार्य सम्पन्न हो जाना चाहिये। न केवल हिन्दू अपितु मुसलमान व ईसाई भी इस कार्य में बाधक हो रहे थे। 28 मार्च को हुई शुद्धि में केवल 200 मेघ ही सम्मिलित हुए।

इस शुद्धि का राजपूतों ने घोर विरोध किया। इन्होंने शुद्ध हुए मेघों को मारा, कुंए से पानी भरने से इन्कार कर दिया और झूठे मुकदमों में फंसा कर गांव छोड़ने पर विवश कर दिया।

सन् 1912 में आर्य मेघोद्धार सभा का गठन कर शुद्धि के इस कार्य को व्यवस्थित रूप दे दिया। मानसिक और धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ अनेक पाठशालायें खोली गई। आर्य सभा के दस्तकारी स्कूल में बढ़ई, दर्जी एवं अन्य दस्तकारी के कार्य सिखाये जाने लगे। मेघ बालकों को गुरुकुल गुजरांवाला, गुरुकुल कांगड़ी में निशुल्क अध्ययन के लिए भेजा गया। सन् 1918 में आर्य नगर बसाया।

उसमें आर्य समाज भवन, कन्या पाठशाला, चिकित्सालय, सहकारी क्रय-विक्रय केन्द्र आदि संस्थाओं का गठन किया गया और एक आदर्श उद्धारक बस्ती का रूप दे दिया गया।

सन् 1921 में इस कार्य की सुविधा के लिए दिल्ली मे विधिपूर्वक दलितोद्धार सभा की स्थापना कर दी गई इस सभा के उद्देश्य इस प्रकार थे :—

(1) भारत की दलित जातियों में सदाचार का प्रचार।
(2) उनको धर्मच्युत करने वाले आक्रमणों से बचाना।
(3) घृणा के मिथ्या संस्कारों को दूर करना।
(4) दलितों के खोये हुए मानवीय अधिकारों को दिलाना।
(5) दलितों में शिक्षा का प्रसार करना।

इस सभा द्वारा बेगार प्रथा के उन्मूलन, कुओं पर पानी भरने देना, अछूतों के लिए मन्दिरों के द्वार खुले रखना, शिक्षा का प्रचार करना आदि अनेक कार्य किये गये। उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा आदि प्रान्तों के दलित अछूत समझे जाने वाले लोग, आर्य समाज के दलितोद्धार कार्यक्रम से विशेष आकृष्ट हुए।

आर्य बिरादरी सम्मेलन बम्बई एवं जाति-पाँति तोड़क मण्डल पंजाब ने जाति-पाँति की दीवालों को ढहाने के लिए युद्ध स्तर पर प्रयास किये। वर्ष 1917 के अन्तिम दिनों में आर्य बिरादरी सम्मेलन के तीसरे अधिवेशन में जाति प्रथा के खिलाफ पांच प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

सन् 1890 ई. में आर्य शिरोमणि सभा की स्थापना की गई। जिसमें जाति प्रथा का उन्मूलन कर, आर्य बिरादरी के गठन की शुरुआत की। आर्य भारती सभा की स्थापना 1907 में हुई। सन् 1922 मे भाई परमानन्द के निवास पर जाति पाँति तोड़क मण्डल बनाया गया। जिसका काम खान-पान सम्बन्धी प्रतिबन्धों को हटाना तथा अस्पृश्यता का निषेध करना था। भाई भूमानन्द और सन्तराम आदि इस मण्डल के अग्रणी नेता थे।

आर्य समाज के इस आन्दोलन के कारण बम्बई विधान परिषद को महार एवं अन्य दलित वर्गों को शिक्षा एवम् नौकरी के क्षेत्र में वरीयता देने का कानून पारित करना पड़ा। कलकत्ता, मद्रास तथा उत्तर प्रदेश की परिषदों ने भी दलित कल्याणकारी कानून पारित करने के प्रयास आरम्भ किये।

6 अक्टूबर को साधारण सभा ने रहतियों को आर्य सभासद बनाने तथा उनके साथ खुला खान-पान करने में असमर्थता प्रकट की। केवल फर्श पर बैठने, कुओं पर पानी भरने तथा उत्सव में सम्मिलित होने की ही स्वतन्त्रता दी। 23 अप्रेल 1900 को लगभग सौ रहतियों की शुद्धि का प्रस्ताव हुआ परन्तु बहुपक्ष ने इसे गिरा दिया। यहां से निराश होकर लाला मुन्शीराम चालीस के लगभग रहतियों को लाहौर ले गये। यहां के आर्य समाज सामान्यतः लाहौर के बाहर के होते थे। उन पर कोई बिरादरी का बन्धन नहीं था। उन्होंने शुद्धि का प्रबन्ध करना स्वीकार कर लिया। सिख भाईयों को अवसर दिया गया कि वे चाहें तो रहतियों को अपने साथ मिला लें। परन्तु वे इसमें असमर्थ थे। अन्त में 3 जून 1900 को क्षौर करा कर रहतियों का वह समूह का समूह आर्य बना लिया गया। लाहौर आर्य समाज का वह दृश्य देखने योग्य था।

इसके बाद पंजाब में लायलपुर, रोपड़, जालन्धर, लुधियाना आदि स्थानों पर रहतियों की शुद्धि बराबर होती रही ओडों के समान ये जाति भी अस्पृश्यों में गिनी जाती थी। यह जाति स्यालकोट, गुरुदासपुर तथा गुजरात एवं जम्मू कश्मीर रियासत में बसती है। सन् 1921 की जनगणना में इनकी संख्या 3 लाख बताई गई है। मेघ लोग अन्य अस्पृश्य वर्गों सांसियों, चूहों, चमारों आदि में पुरोहित का कार्य करते थे। लेकिन फिर भी सदियों से धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक सभी प्रकार के अधिकारों से वंचित थे। उनके स्पर्श मात्र को ही अपवित्रता समझी जाती थी। 14 मार्च 1903 को स्यालकोट आर्य समाज की अन्तरंग सभा में यह निश्चय हो गया कि 29 मार्च के वार्षिक उत्सव के समय शुद्धि का कार्य सम्पन्न हो जाना चाहिये। न केवल हिन्दू अपितु मुसलमान व ईसाई भी इस कार्य में बाधक हो रहे थे। 28 मार्च को हुई शुद्धि मे केवल 200 मेघ ही सम्मिलित हुए।

इस शुद्धि का राजपूतों ने घोर विरोध किया। इन्होंने शुद्ध हुए मेघों को मारा, कुंए से पानी भरने से इन्कार कर दिया और झूठे मुकदमों मे फंसा कर गांव छोड़ने पर विवश कर दिया।

सन् 1912 में आर्य मेघोद्धार सभा का गठन कर शुद्धि के इस कार्य को व्यवस्थित रूप दे दिया। मानसिक और धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ अनेक पाठशालायें खोली गई। आर्य सभा के दस्तकारी स्कूल में बढ़ई, दर्जी एव अन्य दस्तकारी के कार्य सिखाये जाने लगे। मेघ बालकों को गुरुकुल गुजरावाला, गुरुकुल कांगड़ी में निशुल्क अध्ययन के लिए भेजा गया। सन् 1918 में आर्य नगर बसाया।

उसमें आर्य समाज भवन, कन्या पाठशाला, चिकित्सालय, सहकारी क्रय-विक्रय केन्द्र आदि संस्थाओं का गठन किया गया और एक आदर्श "उद्धारक" बस्ती का रूप दे दिया गया।

सन् 1921 में इस कार्य की सुविधा के लिए दिल्ली में विधिपूर्वक दलितोद्धार सभा की स्थापना कर दी गई इस सभा के उद्देश्य इस प्रकार थे :—

(1) भारत की दलित जातियों में सदाचार का प्रसार।
(2) उनको धर्मच्युत करने वाले आक्रमणों से बचाना।
(3) घृणा के मिथ्या संस्कारों को दूर करना।
(4) दलितों के खोये हुए मानवीय अधिकारों को दिलाना।
(5) दलितों में शिक्षा का प्रसार करना।

इस सभा द्वारा बेगार प्रथा के उन्मूलन, कुओं पर पानी भरने देना, अछूतों के लिए मन्दिरों के द्वार खुले रखना, शिक्षा का प्रचार करना आदि अनेक कार्य किये गये। उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा आदि प्रान्तों के दलित अछूत समझे जाने वाले लोग, आर्य समाज के दलितोद्धार कार्यक्रम से विशेष आकृष्ट हुए।

आर्य बिरादरी सम्मेलन बम्बई एवं जाति-पाँति तोड़क मण्डल पंजाब ने जाति-पांति की दीवालो को ढ़हाने के लिए युद्ध स्तर पर प्रयास किये। वर्ष 1917 के अन्तिम दिनों में आर्य बिरादरी सम्मेलन के तीसरे अधिवेशन में जाति प्रथा के खिलाफ पांच प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

सन् 1890 ई. में आर्य शिरोमणि सभा की स्थापना की गई। जिसमें जाति प्रथा का उन्मूलन कर, आर्य बिरादरी के गठन की शुरुआत की। आर्य भारती सभा की स्थापना 1907 में हुई। सन् 1922 में भाई परमानन्द के निवास पर जाति पाति तोड़क मण्डल बनाया गया। जिसका काम खान-पान सम्बन्धी प्रतिबन्धों को हटाना तथा अस्पृश्यता का निषेध करना था। भाई भूमानन्द और सन्तराम आदि इस मण्डल के अग्रणी नेता थे।

आर्य समाज के इस आन्दोलन के कारण बम्बई विधान परिषद को महार एवं अन्य दलित वर्गो को शिक्षा एवम् नौकरी के क्षेत्र में वरीयता देने का कानून पारित करना पड़ा। कलकत्ता, मद्रास तथा उत्तर प्रदेश की परिषदों ने भी दलित कल्याणकारी कानून पारित करने के प्रयास आरम्भ किये।

लाला लाजपत राय ने दलित उद्धार के लिये बढ-चढ़ कर कार्य किये। सन् 1912 में दिसम्बर मे कराची मे आयोजित एक सभा की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने कहा कि—

"मेरे विचार मे इससे बढकर और कोई अत्याचार किसी बुद्धि सम्पन्न मनुष्य के साथ नही हो सकता कि उसे ऐसी परिस्थितियो मे रखा जाय जिससे उसके हृदय मे ऐसे भाव उत्पन्न हो जावें कि मैं सदा के लिये अविद्या, दासता और दीनता के लिये ही पैदा हुआ हूं और मुझे अपनी भलाई के लिये किसी प्रकार की आशा करना एक बडा पाप है।"

मई 1910 के "इण्डियन रिव्यु" में उन्होंने लिखा—

"इन जातियो के लिये सबसे अधिक आवश्यकता शिक्षा की है जिससे इनमे नेता और समाज सुधारक उत्पन्न हों। ये नेता और सुधारक सामाजिक सगठन मे उन्हे अपनी परिस्थिति और पद का बोध करायेंगे। जाति की भलाई के लिए यह आवश्यक है कि दलित जातियों की शिक्षा का बीडा उठाया जाय उनमे अदम्य उत्साह से शिक्षा का प्रचार किया जाय। अछूत जातियो की शिक्षा हमारी सामाजिक समस्या की पूर्ति करने मे सहायक होगी।" सन् 1925 मे उन्होंने इस कार्य के लिये अखिल भारतीय कमेटी की स्थापना की।

आर्य समाज द्वारा चलाये गये आन्दोलन का पुरातन पंथी कट्टर हिन्दुओं ने कट्टर विरोध किया। परन्तु वे क्रान्ति के विचारों को रोक नही सके। क्योंकि बहुत बड़ी संख्या में दलित समाज में जाग्रति पैदा हो रही थी।

रामकृष्ण मिशन की स्थापना उनके शिष्य परम तेजस्वी स्वामी विवेकानन्द ने की। स्वामी विवेकानन्द ने अस्पृश्यता जैसे कलक के लिये कट्टर पंथी हिन्दुओ का खुलकर विरोध किया। जाति-पाति की घृणा से समाज को बचाने के लिये, छुआछूत को मिटाने के लिये और दलितों को उठाने के लिये, उन्होने भी संघर्ष किया। इस आन्दोलन में थियोसोफिकल सोसायटी ने भी योगदान दिया

महात्मा गांधी और दलितोद्धार—हालाँकि महात्मा गांधी अपने समय के चोटी के राष्ट्रीय नेता थे उन्होंने असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन और 1942 मे भारत छोडो आन्दोलन चलाकर भारत की जनता को राष्ट्रीय शक्ति से भर दिया और शक्तिशाली ब्रिटिश साम्राज्य की जडें हिला दी। फिर भी वे दलितोउद्धार के लिए, वर्ण व्यवस्था का विरोध करने का साहस नहीं जुटा

पाये। दलितोद्धार के प्रश्न पर उनके दलितों के नेता डा. अम्बेडकर से गम्भीर मतभेद हो गये। अन्त में 1932 में पूना पैक्ट हो जाने के बाद ही यह मतभेद दूर हो गये। जिस तरह गांधी ने पाकिस्तान बनने की बात पर यह कहा कि पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा, उस तरह उन्होंने कट्टर रूप जाति-पांति को मिटाने का घोर वर्ण व्यवस्था को जड़मूल से उखाड़ने का कभी नहीं अपनाया। उल्टे उन्होंने वर्ण व्यवस्था का समर्थन ही किया। इसी कारण डा. अम्बेडकर और उनके अनुयायी महात्मा गांधी को दलित क्रान्ति की, एक बहुत बड़ी बाधा मानते हैं।

इतना सब कुछ होते हुए भी पूना पैक्ट के बाद गांधी ने दलितोद्धार के लिये काम किये उनकी अनदेखी नहीं की जा सकती। 1933 में उन्होंने दलित कल्याण के लिये 'हरिजन सेवक संघ' की स्थापना की तथा 'हरिजन' नामक एक पत्र प्रकाशित किया। वे स्वयं हरिजनों के साथ घुलमिल गये यहां तक कि उन्होंने अस्पृश्यता की घृणा मिटाने के लिये स्वयं झाड़ू लेकर नालियां साफ करने और मल मूत्र तक उठाने का कार्य किया। उनकी धारणा हृदय परिवर्तन द्वारा अस्पृश्यता एवं जाति भेद को मिटाने की थी। उनका कथन है कि—

"अस्पृश्यता कानून के बल से दूर नहीं होगी। वह तभी दूर होगी जब हिन्दुओं का बहुमत इस बात को अनुभव करले कि अस्पृश्यता ईश्वर और मनुष्य के विरुद्ध एक अपराध है और इसके लिये वे लज्जित है।"

ज्योति बा फुले : ज्योति बा फुले का नाम महाराष्ट्र के ही नहीं सारे देश के क्रान्तिकारी सुधारकों में बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। उन्होंने महाराष्ट्र में दलित वर्ग, पिछड़े वर्ग एवम् महिलाओं को ऊपर उठाने के लिये जबरदस्त आन्दोलन आरम्भ किया।

उन्होंने मनुस्मृति के इस सिद्धान्त की कटु आलोचना की कि ब्राह्मण सदैव ब्राह्मण रहेगा और शूद्र सदैव शूद्र। ज्योति बा फुले ने सबसे पहले, दलितों को, अपने अधिकार के लिये और अन्याय का विरोध करने के लिये, लड़ने को तैयार होने का आह्वान किया।

डॉ. अम्बेडकर ने महात्मा से जबरदस्त प्रेरणा हासिल की। उन्होंने अपनी पुस्तक "शूद्र कौन थे" महात्मा फुले को इन शब्दों के साथ समर्पित की है— "आधुनिक भारत के महान् शूद्र महात्मा ज्योति बा (1829-1990) की स्मृति में जिन्होंने निम्न वर्गीय हिन्दुओं की अन्तरात्मा को उच्च वर्गों के दलन के विरुद्ध

जगाया और इस मत का प्रतिपादन किया कि भारत के लिये विदेशी शासन से मुक्ति का प्रश्न उतना महत्वपूर्ण नही है जितना कि सामाजिक प्रजातन्त्र का प्रश्न।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर : वैसे तो ज्योति बा फुले के क्रान्तिकारी विचारों से और उनके पूर्व की परिस्थितियों से दलित क्रान्ति का बीजारोपण हो चुका था। परन्तु इस जन आन्दोलन को व्यवस्थित एवम् संगठित देशव्यापी आन्दोलन का रूप, देने का श्रेय, भारत रत्न डॉ. अम्बेडकर को दिया जाता है। इसी कारण उन्हें दलित क्रान्तिकारी भी कहा जाता है।

उन्होने सबसे पहले इस आन्दोलन को दलितों का स्वयं का आन्दोलन बनाया। उनका विश्वास था कि दलितों का उत्थान उनके शिक्षित होने पर, संघर्ष द्वारा ही सम्भव होगा। इसी कारण उन्होने बार-बार शिक्षा, संगठन और संघर्ष का आह्वान दलितों के लिये किया।

डॉ. अम्बेडकर दलित समाज के पहले व्यक्ति थे जिन्होने विपरीत परिस्थितियों के बावजूद शिक्षा के उन्नत स्तर को हासिल किया। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने महाड़ जल सत्याग्रह चला कर दलितो को उनकी अपनी संगठित शक्ति के बल पर, चोवदार तालाब से पानी पीने के अधिकार को प्राप्त किया। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होने कट्टर हिन्दुओं के विरोध के बावजूद अपने लोगों के बल पर सत्याग्रह चलाकर नासिक के कालाराम मन्दिर में प्रवेश के दलितों के अधिकार को हासिल किया। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने इस देश की भेदभावपूर्ण सामाजिक व्यवस्था को बदलकर भारत के नये संविधान की रचना की।

पूरे दलित समाज को अपने उद्धारक डॉ. भीमराव अम्बेडकर पर गर्व है। वे उनकी प्रेरणा के प्रमुख स्रोत है तथा देश की भेदभावपूर्ण सामाजिक एवम् आर्थिक व्यवस्थाओं को बदलने के लिये संघर्षरत है। यही संघर्ष आने वाली जन क्रान्ति को जन्म देगा। जिसमे दलित वर्ग के साथ-साथ देश का सम्पूर्ण निर्धन एवं पिछड़ा हुआ समुदाय मजदूर एवम् महिलायें एक जुट हो जायेंगे।

दलित क्रान्ति के लिये डॉ. अम्बेडकर का निधन एक बहुत बड़ा आघात सिद्ध हुआ है। क्योकि दलितों को उनके बाद, उनके लिये मर मिटने वाला नेता, आज तक नही मिला है। हालांकि बाबू जगजीवन राम ने सत्ता से जुड़कर दलित गौरव को ऊँचा उठाया था। राजनैतिक शक्ति के केन्द्र तक वे पहुँचे थे परन्तु दलित जागरण के लिये, दलित क्रान्ति के लिये, वे कुछ भी नही कर सके।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा गठित रिपब्लिकन पार्टी भी उनकी मृत्यु के बाद सत्ता की चक्रव्यूह में फंसकर छिन्न-भिन्न हो गई। यह स्थिति बहुत ही दुःखद है कि दलित वर्ग के अन्दर राजनीतिक चेतना का अभाव है। उनका अपना कोई संयुक्त मोर्चा एवं दल नहीं है। आज अनेक राजनेता और समाज सुधारक दलित समाज के अन्दर कार्यरत अवश्य है परन्तु उनका उद्देश्य किसी न किसी तरह सत्ता से जुड़ जाने एवम् अपने हितो की पूर्ति कर लेने तक ही सीमित हो गया है। अनेक संस्थाओं में अनेक तरह के लोग कार्यरत है परन्तु उनके कार्य मौसमी हवा की तरह आरम्भ होते है और खत्म हो जाते है।

हाल ही कुछ समय से दलित राजनीति में काशीराम, बहुजन समाज पार्टी का गठन करके, दलित समाज से बहुजन समाज की व्यापक धारणा को लेकर बढ़े है। उन्होंने बहुजन की परिभाषा करते हुये घोषित किया है कि 15 प्रतिशत साधन सम्पन्न पूंजीपति वर्ग द्वारा 85 प्रतिशत बहुजन का शोषण हो रहा है। यदि ये शोषण के शिकार बहुजन लोग, जाति, धर्म की संकीर्णता तैयार कर एक जुट हो जायें तो देश की सामाजिक राजनीतिक एवम् आर्थिक व्यवस्थाओं में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सकते है। यह केवल उन्होने कहा ही नही है बल्कि उत्तर प्रदेश विधान सभा मे 13 विधायक और लोकसभा मे 3 सांसद भेजकर सिद्ध भी किया है।

सारे अध्याय का निष्कर्ष यह है कि देश के अन्दर क्रान्तिकारी परिवर्तनो के लिये, दलित वर्ग को एक संगठित राजनीतिक मोर्चे की आवश्यकता है, जिसमें कि देश के अन्य सभी आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़े हुये लोग सम्मिलित हो, तो जन क्रान्ति का स्वप्न साकार हो सकता है।

अध्याय पांच

दलित क्रान्ति के जनक-डॉ. अम्बेडकर

दलित समाज को शोषण, अन्याय एवं असमानता से मुक्त कराने का सर्व प्रथम प्रयास महात्मा बुद्ध ने किया। उन्होंने व्यक्ति मात्र की समानता पर जोर दिया तथा हिन्दू धर्म में व्याप्त छुआछूत, कर्मकाण्ड एवं भेदभाव का विरोध किया।

बुद्ध ने दलितों को गले लगाया। उनकी प्रज्ञा को पोषित किया तथा मानवता, सदाचार, अहिंसा, करुणा, मैत्री एवं सेवा को ही धर्म कहा। इस कारण उनका धर्म लोकप्रिय हुआ और भारत में ही नहीं, दुनियां के देशों तक बौद्ध धर्म का प्रचार एवं प्रसार हुआ। सम्राट अशोक के समय बौद्ध धर्म भारत का प्रमुख धर्म था। परन्तु कालान्तर में कट्टर हिन्दुओं ने बौद्ध धर्म को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया एवं प्रज्ञा, करुणा एवं मानव मात्र की सेवा की भावना, लुप्त हो गई। पुनः हिन्दू कट्टरवाद, ब्राह्मणवाद एवं सवर्णवाद का बोलबाला हो गया और उन्होंने सख्ती से दलित समाज को पुनः दबा दिया और शोषण का शिकंजा कस दिया।

मध्यकाल में दलित चेतना को थोड़ा सा बल मिला महात्मा रविदास, कबीर और नानक के द्वारा, परन्तु उनका यह आन्दोलन मात्र धार्मिक क्षेत्र तक ही सीमित रह सका। उससे कोई सामाजिक प्रभाव पैदा न हो सका।

आधुनिक युग मे दलित चेतना को जागृत कर दलित शक्ति को उठाने का; सारा श्रेय दलितों के मसीहा डॉ. भीमराव अम्बेडकर को जाता है। उस महान् विभूति ने दलितों के कल्याण का वह शक्तिशाली मार्ग बनाया जिस पर कि दलित शक्ति निरन्तर तेजी से आगे बढती जा रही है। उन्होंने अपना सारा जीवन दलित चेतना को जगाने में लगा दिया, इसी कारण उन्हें दलित क्रान्ति का जनक कहा जाता है।

दलितों को स्वयं अपने बलबूते पर, जागृत होकर उठने, शिक्षित बनने, संगठित रहकर संघर्ष करने के आन्दोलन की शुरुआत डॉ. अम्बेडकर ने की। उन्होंने अधिकारों से वंचित एक मृतप्राय. समाज में राजनीतिक चेतना की शक्ति पैदा की। इसी कारण सम्पूर्ण दलित समाज ने उन्हें अपना नेता, उद्धारक एवम् मसीहा मान लिया। उनके नेतृत्व में भारतीय दलित समाज के लिये, एक नये सुनहरे युग का सूत्रपात हुआ।

डॉ. अम्बेडकर का जन्म दलित समाज के अन्दर हुआ था। उन्होंने अपने बचपन, जवानी, एवं प्रौढ़ अवस्था में कदम-कदम पर जातिगत भेद-भाव, असमानता एवं अस्पृश्यता के घृणित व्यवहार को, स्वयं झेला था। इसी कारण उन्होंने समाज की घृणित जाति-व्यवस्था, अस्पृश्यता एवं असमानता को मिटाने का, बचपन में ही संकल्प ले लिया था। जिसमें उनके सुशिक्षित सूबेदार पिता रामजी सकपाल, माँ, भीमा बाई की विशेष प्रेरणा एवं आशीर्वाद उन्हें मिला।

डॉ अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को महू (इन्दौर) में हुआ था। उनके पिता मूलतः महाराष्ट्र के रत्नागिरी जिले के अम्बावड़े गाँव के निवासी थे। वे जाति से महार थे। जो कि महाराष्ट्र की प्रमुख दलित जाति है। उन दिनों वे महू में सूबेदार मेजर के पद पर सेना में सेवारत थे, वहीं भारतरत्न डॉ. अम्बेडकर का जन्म हुआ।

सन् 1894 ई. को सूबेदार रामजी सकपाल सेवा निवृत्त होकर अपने पूर्वजों के मूल गाँव अम्बावडे के पास, डापोली गाँव मे आये। उस समय अंग्रेजों ने सैनिकों के बच्चों की पढ़ाई के लिये सतारा में, कैम्प स्कूल की स्थापना की थी। भीमराव दलित जाति के थे। इस कारण भारत के सामान्य स्कूलों मे तो उनका प्रवेश सम्भव नही था क्योंकि उस समय जाति व्यवस्था जोरों पर थी। अछूत को पढ़ने का अधिकार ही नहीं था। सूबेदार रामजी सकपाल की काफी भाग दौड़ के बाद भीमराव व उनके भाई आनन्द राव को सतारा के कैम्प स्कूल में दाखिला मिल गया। परन्तु स्कूल के छात्रों एवं अध्यापकों द्वारा बालक भीमराव के साथ बड़ा ही घृणित, अपमान जनक एवं अस्पृश्यता का व्यवहार किया गया। परन्तु सकल्प के धनी इस बालक ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की तथा कठिनाईयों के बावजूद संघर्षरत रहकर 1912 मे उन्होने एल्फिन्सटन कालेज बम्बई से स्नातक की डिग्री प्राप्त की।

उन्होंने जैसे-जैसे शिक्षा के क्षेत्र में कदम रखा उनकी ज्ञान पिपासा बढ़ती

गई। आर्थिक अभाव एवं पिता की मृत्यु ने उन्हें कमजोर कर रख दिया फिर भी उन्होंने अपनी आगे की पढ़ाई का संकल्प नही छोड़ा। उनके पिता की मृत्यु 2 फरवरी 1913 को हो गई। घर की जिम्मेदारियों की चिन्ता अलग थी। परन्तु कुदरत ने उनका साथ दिया, बड़ौदा के महाराजा ने उन्हें अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय में एम. ए. की पढाई के लिये छात्रवृत्ति स्वीकार की। 1915 ई. को उन्होंने अर्थशास्त्र विषय में कोलम्बिया विश्वविद्य विद्यालय अमेरिका से एम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। वही से कालान्तर में उन्होने पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। उन्होने इंग्लैण्ड के लन्दन के प्रमुख शिक्षा केन्द्र ग्रेजइन, स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स एण्ड पोलिटिकल साइन्स जैसे महान् शिक्षण संस्थानो से एम. एस. सी. एवं बार एटला की डिग्रियां प्राप्त की। इस तरह से उन्होने आर्थिक संघर्षों, विषम सामाजिक परिस्थितियो एवं शोषक समाज व्यवस्था से जूझते हुये, अपने आत्मबल पर एम. ए., एम. एस. सी , पी. एच डी , डी. एस. सी., एल. एल. डी. लिट् एवं बार एटला की डिग्रियां हासिल की। यह उनकी उच्च शिक्षा का कीर्तिमान था। भारत के उस समय के किसी भी व्यक्ति ने इतने उच्च स्तर की शिक्षा, उस समय प्राप्त नही की थी। भारतीय दलित समाज को, ऐसे युग पुरुष डॉ. अम्बेडकर पर गर्व है।

डॉ अम्बेडकर ने छात्रवृत्ति की शर्तों के पालन में 1917 ई. में बड़ौदा महाराजा के सैन्य सचिव के रूप में अपनी सेवा दी। बड़ौदा में सवर्ण हिन्दू उनकी प्रतिभा एवं प्रगति से जल भुन गये। रियासत के छोटे से कर्मचारी तक, उन्हे उपेक्षित की दृष्टि से देखते थे। इतनी उच्च शिक्षा एव प्रभाव का पद प्राप्त करने के बावजूद डॉ. अम्बेडकर को अछूत कुल में पैदा होने का अपमान झेलना पड़ा। यह इस देश का दुर्भाग्य ही था। उन्हें बड़ौदा में रहने तक को किसी ने मकान तक नही दिया और विवश होकर उन्हे रियासत की नौकरी छोड़नी पड़ी।

बम्बई में आकर उन्होने रहना प्रारम्भ किया। उन्हें सर्वाधिक चिन्ता अपने दलित साथियो के उद्धार की थी दलितों की चिन्ताओं ने उन्हें ऐसा घेरा कि वे स्वयं की तकलीफों को भी भूलते गये। 1918 में उन्होंने अर्थशास्त्र के प्रोफेसर के रूप में अपनी आजीविका आरम्भ की तथा इसके साथ ही अछूतों के उद्धार कार्य में वे रुचि लेने लगे।

दलितो में चेतना जगाने के लिये 1920 में उन्होंने "मूक नायक" मराठी पत्र प्रारम्भ किया। धीरे-धीरे उनके कार्यों एव आदर्शों में दलित समाज की आस्था

जमती गई। हजारों दलित युवक, समाज सेवक, नेता एवं प्रचारक उनके आस-पास जुड़ते गये। 21 मार्च 1920 को कोल्हापुर रियासत में दलितों की एक विशाल सभा का आयोजन किया गया। जिसका अध्यक्ष डा. अम्बेडकर को बनाया गया। उस सभा में छत्रपति साहू महाराज ने विशिष्ट अतिथि के रूप में डा. अम्बेडकर के सम्बन्ध में जो उद्‌गार पेश किये वे जानने योग्य हैं।

"भाईयो ! आज आपको डा. अम्बेडकर के रूप में अपना रक्षक नेता मिला है। मुझे विश्वास है कि यह तुम्हारी छूआ-छूत की बेड़ियों को अवश्य तोड़ेगा। केवल इतना ही नहीं जैसी कि मेरी अन्तरात्मा कहती है, एक समय आयेगा जब डा. अम्बेडकर अखिल भारत के नेता बनेंगे, जिसकी वाणी में प्रभाव एवं प्रसिद्धि प्राप्त होगी।

मई 1920 में नागपुर की दलित समाज की एक सभा का नेतृत्व करते हुये डा. अम्बेडकर के सुझाव पर अखिल भारतीय बहिष्कार परिषद का गठन किया गया उस सभा में उन्होंने कहा कि :—

"दलित समाज की प्रगति में बाधक कोई भी संस्था या व्यक्ति हो, चाहे व दलित समाज का हो, चाहे सवर्ण हिन्दू हो, उसका तीव्र निषेध किया जाना चाहिये।"

नागपुर में हुई परिषद का जिक्र करते हुये डॉ अम्बेडकर ने कहा कि "नागपुर में हुई यह परिषद भारत में एक महत्वपूर्ण घटना थी। जिसमे सर्वप्रथम दलित समाज ने अपने पैरों पर खड़े होकर अपने सामाजिक और राजनैतिक अधिकारों को प्राप्त करने के लिये संगठित आन्दोलन चलाने का संकल्प लिया था। यह सभा भारतीय इतिहास में मील के पत्थर की तरह थी। जिसका अतीत दलित समाज के अज्ञान व शोषण की कहानी थी तथा जिसका भविष्य दलितों के उज्वल अस्तित्व का परिचायक था। मनु के विधान को चुनौती दिये जाने का आरम्भ था। मेरे लिये यह सभा सर्वाधिक महत्व रखती थी। इस सभा ने मेरे विचार एवं कार्यक्रम को स्वीकृति देकर मुझे प्रोत्साहित किया था। लोगों के चेहरे पर आशा की एक किरण मुझे दिखाई दी। मुझे दिखाई दिया कि दलित समाज को सही दिशा मिलेगी तो इस देश की समाज व्यवस्था में बदलाव अवश्य आयेगा।

1923 में अम्बेडकर ने बम्बई उच्च न्यायालय में वकालात आरम्भ की। वकालात में भी उन्होंने कठोर संघर्ष किया परन्तु मेहनत रंग लाई और वे

चोटी के वकीलों में गिने जाने लगे । उनकी कीर्ति धीरे-धीरे फैल रही थी । उसी रफ्तार में दलित जागरण गति पकड़ रहा था ।

20 जुलाई 1924 को डा. अम्बेडकर ने बम्बई मे बहिष्कृत हितकारिणी सभा का गठन कर, दलित आन्दोलन का बीड़ा उठाया । इस सभा का उद्देश्य दलितों में विचार-क्रान्ति लाने के लिये, शिक्षा व जन-चेतना का प्रचार-प्रसार रखा गया । स्कूली शिक्षा पर जोर दिया गया, अनौपचारिक शिक्षा के लिये वाचनालय, विचार-गोष्ठी व सांस्कृतिक प्रचार पर जोर दिया गया । साथ ही दलितों की आर्थिक स्थिति सुधारने के उपाय खोजने एवं उनकी कठिनाइयां दूर करने के लिये समितियों का गठन किया गया । उन्होने 'आत्मा सहायता' ही सबसे उत्तम सहायता है'' का नारा बुलन्द किया । दलित छात्रो के लिये छात्रावास खुलवाये । इस तरह डा. अम्बेडकर के नेतृत्व मे दलित राजनीति ने जन्म लिया, उनके अनुयायी दृढ़ संकल्प होकर उनके मिसन को आगे बढ़ाने में आज भी लगे हैं ।

डा अम्बेडकर दलितो के नायक बन गये । उनकी सभाओ मे दलित स्त्री-पुरुष एवं युवकों की भीड़ जुटने लगी । जब वे अपने दलित साथियों को फटे हाल, पीड़ित, उदास देखते और उन पर होने वाले अत्याचारों की कहानियां सुनते तो करुणा से उनका हृदय भर जाता था । वे अपने दलित साथियों को प्रेम से फटकारते हुये कहते—

"अरे तुम कितनी दुर्दशा मे हो, तुम्हारे असहाय चेहरे देखकर और तुम्हारी हीनता भरे शब्द सुनकर मेरा हृदय रोता है । तुम अपने ऐसे दीन-हीन जीवन से दुनियां के दुख दर्द क्यों बढाते हो ? तुम अपनी मां के गर्भ मे ही क्यों नही मर गये ? अब भी मर जाओगे तो ससार का बड़ा उपकार करोगे । यदि तुम्हे जीवित रहना है तो जिन्दा दिल बन कर जीओ । इस देश के अन्य नागरिकों को मिलता है वैसा अन्न, वस्त्र और मकान तुम्हें भी हासिल हो, यह तुम्हारा जन्म सिद्ध अधिकार है । यह अधिकार प्राप्त करने के लिये तुम्हें ही आगे आना होगा । बड़ी मेहनत तथा दृढ़ता से संघर्ष करना होगा ।"

डा. अम्बेडकर ने अपने भाषणों मे दलितो को अपने उद्धार के लिये स्वयं सुधरने का आह्वान किया । उन्हें समझाया कि अपनी हीनता को निकाल फेंके, किसी से भयभीत ना हो । अन्याय का विरोध करें । अत्याचारी का मुकाबला शक्ति से करें । गन्दे न रहें । घृणित व गन्दे काम छोड़ें । मृत पशुओ का मास खाना छोड़ें । मदिरा एव अन्य नशे की लत से अपने आप को बचावें । अन्याय

होने पर सामूहिक रूप से उसका खुलकर प्रतिकार करें। साफ सफाई से रहें। अपनी हीनता त्याग कर पुरुषार्थी बनें। सबसे अधिक स्वयं को जागृत करने एवं बच्चो को शिक्षित बनाने पर दें।

डा. अम्बेडकर ने दलित आन्दोलन को गति दी। वे देश के विभिन्न भागो मे गये तथा दलितों को जगाने एवं संगठित करने का भरसक प्रयत्न किया। उन्होने दलितो को मानवीय अधिकार हासिल करने के लिये संगठित जन आन्दोलन चलाने की सीख दी। दक्षिण भारत की एक विशाल सभा मे उन्होंने कहा कि—

"तुम्हारे गाँव का ब्राह्मण चाहे कितना ही निर्धन क्यों न हो अपने बच्चों को पढ़ाता है। उसका लड़का पढ़ते-पढ़ते ही डिप्टी, कलैक्टर बन जाता है। तुम ऐसा क्यों नहीं करते हो ? तुम अपने बच्चो को पढ़ाने क्यो नही भेजते हो ? क्या तुम चाहते हो कि तुम्हारे बच्चे भी तुम्हारी तरह शोषण के नर्क में पड़े रहें ? शराब पीते रहे व मृत पशुओं का मांस खाते रहे।"

बाबा साहेब डा. अम्बेडकर ने दलितो को नागरिक अधिकार दिलाने के लिये 10 एवं 20 मार्च 1927 को महाड़ जल सत्याग्रह का नेतृत्व किया उस समय महाड़ में आयोजित एक विशाल दलित सभा को सम्बोधित करते हुये डा. अम्बेडकर ने कहा कि—

"ऐसा काम करो जिससे तुम्हारे बाल बच्चे तुमसे अच्छी स्थिति मे रहे यदि आप ऐसा करने मे असमर्थ रहोगे तो आदमी के माता पिता व पशु के नर, मादा होने मे कोई अन्तर नही रहेगा। स्वतन्त्रता किसी को उपहार के रूप मे नही मिलती उसके लिये संघर्ष किया जाता है। आत्म उत्थान अन्य लोगों के आशीर्वाद से नही होता। बल्कि अपने ही प्रयत्न संघर्ष तथा परिश्रम से होता है।"

20 मार्च 1927 को सुबह डा. अम्बेडकर के नेतृत्व मे लगभग पांच हजार दलित नर नारियो ने जुलूस के रूप में महाड़ के चोवदार तालाब मे, अपने सार्वजनिक तालाब से पानी पीने के अधिकार को हासिल किया। उस विशाल जन समूह को तालाब से पानी पीने से रोकने का साहस किसी को न हुआ।

हालांकि इस घटना से क्षुब्ध होकर क्रूर कट्टर हिन्दुओं ने दलितों के पंडाल को तोड़ दिया, निहत्थे लोगों के साथ मारपीट की। भोजन को मिट्टी मे मिला दिया। उस समय डा. अम्बेडकर डाक बंगले मे अपने साथियों से विचार-विमर्श

कर रहे थे। समाचार सुनते ही वे पुलिस इन्सपेक्टर से मिले पर वह स्थिति को नहीं सम्भाल सका। गुण्डों ने डा. अम्बेडकर पर भी आक्रमण की कुचेष्टा की परन्तु उनके पौरुष के सामने उन्हें हटना पड़ा। इस घटना से डा. अम्बेडकर का मन स्वर्ण हिन्दुओं के प्रति विद्रोही हो गया उन्होंने शोषण व्यवस्था की प्रतीक मनुस्मृति को सार्वजनिक रूप से जला कर घोषणा की कि वे ऐसी किसी भी व्यवस्था को स्वीकार करने को तैयार नहीं है जो दलितों के मानवीय अधिकारों का विरोध करती हो।

2 मार्च 1930 को डा. अम्बेडकर ने नासिक के कालाराम मन्दिर में दलितों के प्रवेश के लिए सत्याग्रह किया। वे एक विशाल जुलुस लेकर मन्दिर प्रवेश के लिए गये। मन्दिर के प्रबन्धकों द्वारा विशाल जुलूस को देखकर मन्दिर के दरवाजे बन्द कर दिये गये। शहर में धारा 144 लगा दी गई। करीब एक माह तक सत्याग्रह चलता रहा। अन्त में रथ-यात्रा में दलितों को सम्मिलित करने की शर्त पर सत्याग्रह टूटा। रथ-यात्रा के दिन धोखा देकर सवर्णों ने दलितों पर हमला बोल दिया। दोनों ओर से खूनी दंगे हो गये। अनेक लोग हताहत हुये। पुलिस ने भी सवर्णों का साथ दिया। खेद की बात तो यह है कि गांधी और उनके साथियों ने डा. अम्बेडकर के आन्दोलन का विरोध किया जो अपने लिए आजादी चाहते थे, वे भी दलितों की आजादी के विरुद्ध थे।

6 सितम्बर, 1930 को डा. अम्बेडकर को लन्दन में होने वाली गोल मेज परिषद में सम्मिलित होने के लिए वायसराय का आमन्त्रण पत्र मिला, जिस पर वे लन्दन गये। 12 नवम्बर, 1930 को ब्रिटिश प्रधान मन्त्री मेकडोनाल्ड की अध्यक्षता में हुई गोल मेज परिषद की बैठक में डा. अम्बेडकर ने अपना पक्ष प्रस्तुत करते हुये कहा कि—

"मैं जिन लोगों के प्रतिनिधि की हैसियत से यहां खड़ा हूं उनकी संख्या हिन्दुस्तान की कुल जनसंख्या का पांचवा भाग है अर्थात् इग्लैण्ड व फ्रांस की जनसंख्या के बराबर है। आज उन्हें दास बनकर गुलामों की तरह जीना पड़ रहा है।

डा. अम्बेडकर ने प्रथम गोलमेज परिषद में निर्भिकता से गर्जना करते हुए कहा कि "भारत में अछूत ब्रिटिश शासन के विरुद्ध हैं। वे लोग ऐसी सरकार के पक्ष मे हैं जो जनता की, जनता के लिये, जनता द्वारा बनाई गई हो। दलितों का यह दृष्टिकोण उनकी जागृति और देश भक्ति का प्रतीक है।"

डा. अम्बेडकर के इस स्पष्ट दृष्टिकोण से गोलमेज परिषद में उपस्थित प्रतिनिधि एवं प्रधान मन्त्री आश्चर्य चकित रह गये। उन्हें शायद डा. अम्बेडकर से ऐसे स्पष्टवादी भाषण की उम्मीद न थी।

उन्होंने यह भी कहा कि हमारे लोगों की जो दयनीय स्थिति ब्रिटिश शासन से पूर्व थी, आज भी वैसी ही है। आज भी दलितों को सार्वजनिक जलाशयों से पानी नहीं भरने दिया जाता है, आज भी उन्हें मंदिरों में प्रवेश नहीं करने दिया जाता है। आज भी उनके साथ छूआ छूत का घृणित व्यवहार किया जाता है। ब्रिटिश सरकार ने दलितों को नागरिक अधिकार दिलाने के लिये कुछ भी नहीं किया।

इस तरह डा. अम्बेडकर ने दलितों की आवाज को विश्व के मंच पर उठाया और सारी दुनिया को भारत में दलितों की स्थिति से परिचित कराया। उन्होंने ·931 में हुई गोलमेज परिषद में भाग लेकर दलित समस्या पर विचार करने के लिए ब्रिटिश सरकार को विवश किया। इस तरह भारतीय राजनीति में एक नये युग की शुरूआत हो गयी।

दलितों के उद्धार के प्रश्न पर डा. अम्बेडकर के महात्मा गांधी एवं कांग्रेस से गम्भीर मतभेद हो गये। गांधीजी ने दलितों के हिन्दुओं से पृथक अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया और सत्याग्रह कर अपनी नाराजगी जाहिर की। डा. अम्बेडकर ने दृढ़ता एवं सूझ बूझ से काम लिया और पूना पैक्ट पर सहमति देकर गांधी के प्राणों की रक्षा की। 932 को पूना पैक्ट हुआ, जिसके द्वारा दलितों के कल्याण के लिए, विशेष व्यवस्था किये जाने पर सहमति हो गई।

बाद में डा. अम्बेडकर को भारतीय संविधान की प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाया गया। नये संविधान में उन्होंने प्रजातन्त्रीय, धर्म निरपेक्ष, क्षमता मूलक समाज व्यवस्था की नींव रखी। दलितों के संसद, विधान सभाओं एवं नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था की गई। आज दलित आन्दोलन जो कुछ भी है, वह डा. अम्बेडकर की ही देन है।

डा. अम्बेडकर ने जीवन भर हिन्दू धर्म और समाज व्यवस्था से उत्पन्न अछूतपन की पीड़ा को झेला था। इसी कारण उनके दिल में अपने दलित साथियों के प्रति गहरी सहानुभूति एवं करुणा की भावना थी। दलित पीड़ा को उजागर करते हुये उन्होंने कहा कि "वे दुख जिनसे अछूत पीड़ित हैं, यद्यपि उनका इतना

प्रचार नहीं हुआ है जितना कि यहूदियों के दुखों का, तो भी किसी तरह कम यथार्थ नहीं है । न ही दमन के साधन एवं पद्धतियां जिनका हिन्दुओं ने अछूतों के प्रति प्रयोग किया, इसलिए कम प्रभावशील है कि वे उन तरीकों से कम भयंकर है जिनका प्रयोग नाजियों ने यहूदियों के विरुद्ध किया । यहूदियों के प्रति नाजियों का एन्टी सीमेरिज्म विचार' एवं प्रभाव में अछूतों के विरुद्ध हिन्दुओं के सनातन वादे से किसी भी तरह भिन्न नहीं है ।"

वे आगे कहते हैं :–

"मैंने स्वयं अपने ही अनुभव से यह महसूस किया है कि जातिवाद एवं छुआछूत से ग्रस्त समाज में कितना घोर अन्याय एवं पीड़ा निहित है । छुआछूत एवं जातिवाद ने करोड़ों व्यक्तियों को मानव की स्थिति से नीचे गिरा दिया था । मुझे भेद भाव की यह अमानवीय स्थिति बर्दास्त नहीं थी इसलिए मैंने दलित जागरण एवं सुधार का जबरदस्त आन्दोलन आरम्भ किया ।'

"छुआ छूत एवं जाति व्यवस्था मूलतः वर्ण व्यवस्था में थी, जो कि सम्पूर्ण समाज को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों में विभाजित करती है । अतः मैंने घोषणा की कि मेरे लिए पुराने नामों सहित यह चातुर्यवर्ण व्यवस्था नितांत विकर्षक है और मेरा सम्पूर्ण व्यक्तित्व उसका विरोध करता है ।"

चातुर्यवर्ण से अधिक निकृष्ट और कोई सामाजिक संगठन नहीं हो सकता । यह ऐसी व्यवस्था है जो लोगों को मृत पंगु तथा असक्त बना कर, अच्छे कर्म करने से रोकती है ।"

उन्होंने यह भी महसूस किया कि जाति व्यवस्था की जड़ हिन्दू शास्त्रों में निहित है तथा रूढ़िवादी हिन्दू शास्त्रों का उल्लंघन कभी नहीं कर सकते । भले ही उन्हें अच्छी बातों को तिलांजलि देना पड़े । अतः उन्होंने घोषणा की कि—

"वास्तविक समाधान यह है कि शास्त्रों की पवित्रता से विश्वास को तोड़ा जाय । यदि आप लोगों के विश्वासों एवं मतों को प्रभावित करने के लिए, शास्त्रों की सत्ता को निरन्तर बनाये रखते हैं, तो आप अपनी सफलता की कामना कैसे कर सकते हैं ?

वर्ण व्यवस्था पर कठोर आघात करते हुए उन्होंने कहा–' व्यक्ति की दृष्टि से वर्ण व्यवस्था एक मूर्खता है और एक दम्भ है । उसमें केवल एक ही वर्ग शिक्षा

एवं ज्ञान का अधिकारी है। केवल एक वर्ग हथियारों को रखने व चलाने का अधिकारी है। केवल एक ही वर्ग व्यापार करने का अधिकारी है। केवल एक वर्ग ही सेवा करने का अधिकारी है। नब्बे प्रतिशत हिन्दू ब्राह्मण, वैश्य एवं शूद्र समाज व्यवस्था के अन्तर्गत हथियार नही रख सकते। ऐसी स्थिति में देश की रक्षा संकट की घड़ी मे, सभी को सेना मे भर्ती किए बिना, कैसे की जा सकती ?

उन्होंने ब्राह्मणवाद पर प्रहार करते हुये कहा —

"सभी ब्राह्मण अछूतों के शत्रु है—मुझे उन सभी व्यक्तियों से घृणा है जिनके कि हृदय मे ऊँच-नीच का विचार है, जिसने कि मानव प्राणियों के दूषित होने के विचार का बीज बोया तथा साथ ही सामाजिक असमानता तथा विशेषाधिकारों को जन्म दिया। कोई गैर ब्राह्मण भी जो इन ऊँच-नीच के विचारों को लेकर चलता है, मेरे लिए आलोच्य है। कोई ब्राह्मण या अन्य व्यक्ति जो इन भेदभावों से ऊपर उठकर मानवता का आदर करता है वह मुझे प्रिय है।

ब्राह्मणवाद से मेरा तात्पर्य स्वतन्त्रता, समानता एवं भातृत्व की भावना के निषेध से है। इस अर्थ मे ब्राह्मणवाद सभी वर्गों मे व्याप्त है और मात्र ब्राह्मणों तक ही वह सीमित नहीं है हालांकि वे लोग इसके जन्मदाता है। ब्राह्मणवाद मे न केवल अस्पृश्यता एवं भेदभाव को जन्म दिया बल्कि लोगों को नागरिक अधिकारों से भी वंचित किया। ब्राह्मणवाद इतना सर्वव्यापी है कि उसने आर्थिक क्षेत्र को भी प्रभावित किया।

छुआछूत की जड़ जाति-व्यवस्था है। जाति-व्यवस्था की जड़ वह धर्म है जो वर्णाश्रम से बंधा हुआ है। वर्णाश्रम धर्म की जड़ सर्व सत्तावाद अथवा राजनीतिक शक्ति है।

अतः छुआछूत, जातिवाद व भेदभाव को राजनैतिक सत्ता को हथिया कर ही समाप्त किया जा सकता है। अतः मैंने अपने लोगों का बार बार यही आह्वान किया कि शिक्षित बनो, संगठित बनो तथा अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते हुए राजनीतिक शक्ति हासिल करो। इसके अलावा तुम्हारे उद्धार का कोई उपाय नही है।

डा. अम्बेडकर पक्के राष्ट्र-वादी थे। एक देश चिंतक की हैसियत से, देश की एकता और अखण्डता के लिए चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा कि :-

"मैंने भारतीय राष्ट्रवाद की दृष्टि से यह महसूस किया कि जो हजारों

जातियों मे विभक्त हों, जिनमे ऊँच-नीच की निकृष्ट भावनायें व्याप्त हों वे राजनीतिक एवं सामाजिक रूप में एक राष्ट्रीय समाज का गठन कैसे कर सकते है? मैंने एलान किया कि–क्या दुनिया में ऐसा भी कोई समाज है जिसमे अछूत हो। जिनकी छाया व दृष्टि मात्र से अन्य लोग दूषित हो जाते हों? क्या कोई ऐसा भी समाज है जिसमें प्राचीन लोग जगलो में रहते हों और जो वस्त्र पहनना तक भी नही जानते हों? ऐसे लोगो की कितनी संख्या है? क्या कोई ऐसा भी समाज है, जिसमें अपराधशील जातिया हों। ऐसे लोगों की संख्या बहुत है। दुर्भाग्य है कि ऐसे लोग करोड़ो की सख्या में है, करोडो अछूत, करोड़ों प्राचीन कबीले। कोई विचार कर सकता है कि हिन्दू सभ्यता क्या वास्तव में सभ्यता है?

उनकी दृष्टि में करोड़ों दीन-हीन अछूतों, आदिवासियों, वन वासियों और पिछड़े वर्ग के लोगों को मनुष्य का गरिमापूर्ण दर्जा दिलाना, सबसे बड़ा धर्म था, उसे हिन्दू समाज ने स्वीकार नही किया, यह हिन्दू धर्म का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा।

अन्त मे डा. अम्बेडकर ने महसूस किया कि हिन्दू रहते, अछूतपन, अन्याय शोषण एव अपमान से दलित मुक्त नहीं हो सकते क्योंकि हिन्दू वर्ण व जाति से भिन्न कुछ भी नही है। अतः वे हिन्दु धर्म के कट्टर विरोधी हो गये और एक विद्रोह के स्वर मे उन्होने दलितो का आह्वान किया—

"यदि आप स्थापित व्यवस्था मे कोई मौलिक परिवर्तन लाना चाहते हैं तो आपको वेदों व शास्त्रो के प्रति जो बुद्धि को कोई स्थान नही देते है तथा नैतिकता को कोई स्थान प्रदान नही करते प्रध्वंसक प्रयोग करना पड़ेगा। तुम्हे श्रुतियो एव स्मृतियो के धर्म का विनाश करना पड़ेगा और किसी से कुछ नहीं होगा। इस सम्बन्ध में यह मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है।

वे जन्म भर जातिगत भेदभाव व अस्पृश्यता की भावना से पीड़ित रहे। वे जातिवाद को समाप्त करना चाहते थे। इस जातिवाद के कारण करोड़ों लोगों का सम्बन्ध ऐसी जातियो से, केवल जन्म के आधार पर जुड जाता है जिनके नाम से ही अपमान की गन्ध आती है। कोई भी सभ्य पढ़ा-लिखा व्यक्ति स्वयं को भंगी, चमार, ढेड़ जैसे घृणित नाम वाली जाति का कहलाना पसन्द नही करेगा। अकारण ही वह क्यों अपमान का शिकार बने? यह हर दलित के लिये गम्भीर विचारणीय प्रश्न है। इन जाति के पुछल्लों से मुक्त होना हिन्दू रहते हुए तो कभी संभव नही है। ऐसा डा. अम्बेडकर ने महसूस किया और क्रान्तिकारी घोषणा की—

"दुर्भाग्य से मैं हिन्दू धर्म में पैदा हुआ था। यह मेरे बस की बात नही थी, लेकिन अपमानजनक स्थिति में रहने से इन्कार करना मेरी शक्ति की सीमा में है मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मरते समय मै हिन्दू नही रहूंगा।"

यह उनकी अकेले की पीड़ा नही थी। करोड़ों दलित भाइयों की पीड़ा थी और वे उन्हें जाति के कारण कलंकित जीवन से मुक्ति दिलाने के लिए मार्ग-दर्शन देना चाहते थे। अतः उन्होने धर्मान्तरण की घोषणा की।

उन्होंने धर्मान्तरण की घोषणा 13 अक्टूबर, 1935 को येवला कान्फ्रेन्स मे एक आम सभा में की। सारे देश में तहलका मच गया। अनेक हिन्दू नेताओं की प्रतिक्रिया का जवाब देते हुए उन्होने कहा कि—

'जीवन में धर्म तो आवश्यक है, पर उस धर्म में चिपके रहना कहां की बुद्धिमत्ता है जिसमें कुछ लोगों पर धर्म के नाम पर अन्याय एवं अत्याचार किये जाते है और उन्हें पशु स्तर पर रखने का ग्रन्थों में प्रावधान है।''

14 अक्टूबर, 1956 को नागपुर में सुबह 9 बजकर 45 मिनट पर बाबा साहेब डा. अम्बेडकर ने 5 लाख लोगों की उपस्थिति में, अपने अनेक अनुयायियों के साथ, 83 वर्षीय स्थविर चन्द्रमणी से बौद्ध धर्म की दीक्षा लेकर, बौद्ध धर्म ग्रहण किया। अपने धर्मान्तरण की घटना का उल्लेख करते हुए डा. अम्बेडकर ने 30 अक्टूबर, 1956 को मि. डी. वाली सिंह को लिखा —

"बौद्ध-धर्म-दीक्षा बहुत महान घटना थी। वह भीड़ जो दीक्षा लेने आई, मेरी आशा से परे थी। भगवान बुद्ध का धन्यवाद है कि सब अच्छी तरह सम्पन्न हो गया। हमें अब उन विधियों एवं साधनों पर विचार करना है जिनके द्वारा उन लोगों को बौद्ध धर्म का ज्ञान दिया जा सके, जिन्होंने उसे स्वीकार कर लिया है अथवा मेरे कहने पर स्वीकार करेंगे। मैं चाहता हूं कि बौद्ध संघ अपना दृष्टिकोण बदले और सन्यासी बनने की अपेक्षा भिक्षुओं को, ईसाई मिशनरियों के समान, सामाजिक कार्यकर्त्ता और प्रचारक बनना चाहिये।

———

अध्याय छः

दलित क्रान्ति का विवेकत्रयी सिद्धांत

क्रान्ति का स्वरूप—सर्व प्रथम यह स्पष्ट किया जाना आवश्यक है कि दलित क्रान्ति से मेरा अभिप्राय क्या है' क्योंकि क्रान्ति शब्द का आजकल अत्यधिक प्रयोग अनेक सन्दर्भों में, अनेक व्यक्तियों द्वारा नित्य प्रति हो रहा है।

अधिकांश व्यक्ति आज कल क्रान्ति का अर्थ सीधा ही हिंसा द्वारा, बल प्रयोग कर, *सत्ता परिवर्तन से या मार्क्सवादी ढंग से की गई हिंसात्मक क्रान्ति अथवा* रक्त क्रान्ति से लगाते है।

कुछ रूढी परम्परा एवं दुराग्रह से ग्रसित व्यक्ति क्रान्ति को केवल भाषण एव लेखन का विषय ही समझते है। उनकी नजर मे क्रान्ति का व्यवहारिक जीवन से कोई सम्बन्ध नही है। *ऐसे लोग हर परिवर्तन को नकारात्मक ही लेते हैं।* चाहे वे परिवर्तन कितने ही मानवीय एवं बहुजन हिताय क्यो न हों।

कुछ लोग इतने निकृष्ट एव पुरुषार्थहीन होते हैं कि वे अपने जीवन का कोई उत्तरदायित्व ही नही समझते। *वे हर अनाचार, अत्याचार एवं अपमान को अपने भाग्य का खेल या ईश्वर की लीला मान कर झेलते रहते हैं।* ऐसे लोगों के लिए क्रान्ति का कोई अर्थ नही होता।

मेरा इस सम्बन्ध में सुविचारित दृष्टिकोण है कि भाग्यवाद, कर्मफल और सब कुछ ईश्वर के भरोसे छोड देने के भ्रामक सिद्धान्त, शोषक चतुर लोगों द्वारा, शोषित को गुमराह कर उन्हें शोषण का निरन्तर शिकार बनाये रखने के लिये धर्म के नाम पर फैलाये गये हैं। ताकि शोषित जन समूह को यह अहसास भी नहीं हो सके कि उनके दुखों, अनाचारों और पीड़ाओं के लिये साधन सम्पन्न शोषक वर्ग

उत्तरदायी है । दलित वर्ग के लोग सदियों से अस्पृश्यता के अपमान आर्थिक शोषण, अन्याय एवं अत्याचार का शिकार है फिर भी उनके अन्दर शोषको के प्रति विद्रोह की चिनगारी नहीं फूटती । इसका मुख्य कारण उनका अंध-विश्वास, अज्ञान तथा भाग्य और भगवान मे अन्धी आस्था है ।

वे शोषक एव अन्यायी को आज भी अपना स्वामी अन्नदाता और रक्षक मानते हैं । उन्हें अपने ऊपर बिल्कुल ही भरोसा नही है । उन्हें अपनी क्षमताओं और शक्ति का कोई अन्दाजा नही है । वे या तो शोषको से दया की भीख अपने जीवन के लिए मांगते रहेंगे या अपने कल्याण के लिये किसी काल्पनिक अलौकिक शक्ति से चमत्कार की प्रार्थना करते रहेंगे । जब कि आज तक इन उपायों से उनका जरा भी कल्याण नही हुआ ।

धर्म के नाम पर रूढिवाद, परम्परावाद, रीति-रिवाज की दुहाई साधन सम्पन्न शोषक वर्ग के लोग ही देते हैं क्योंकि वे इन चालबाजियों से अपनी ऊँची स्थिति को सुरक्षित बनाये रखना चाहते है तथा ऐसे लोग दलित वर्गों के उत्थान के लिये उठाये गये, हर नये कदम का विरोध धर्म एवं संस्कृति के नाम पर करते हैं ।

दुख की बात तो यह है कि जब दलित वर्ग के सुशिक्षित व्यक्ति अपने दीन-दलित भाईयों के कल्याण के लिए कोई सुधारवादी क्रान्तिकारी कदम उठाने की बात करते हैं तो दलित वर्ग के बुजुर्ग अशिक्षित पच लोग उनका विरोध करते हैं तथा कई सुधार वादियों को तो ऐसे नासमझ लोग जाति से बहिष्कृत तक कर देते हैं ।

वे अपने पढ़े लिखे युवकों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं तथा शोषक साधन सम्पन्न अनपढ़ गंवार भी उन्हें ईश्वर तुल्य पुज्य नजर आते हैं । इससे ज्यादा शर्मनाक बात और क्या हो सकती है ।

मेरा यह भी स्पष्ट मत है कि मनुष्य का जन्म और मृत्यु भले ही कुदरत के अधीन है परन्तु वह किस तरह जीना चाहता है यह ? निश्चित तौर से उसके बस की बात है । वह चाहे तो एक गरिमाशाली व्यक्ति की तरह जीवन जी सकता है और नही चाहे तो पशुओ के समान उसके जीवन के साथ खिलवाड़ हो सकती है ।

मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है । कोई भी व्यक्ति अपनी विवेक-

शक्ति को जगाकर परम ज्ञानी बन सकता है। अपनी भावनाओं को व्यापक बनाकर सारे जगत को अपने में समेट सकता है। तथापि अपने शौर्य और पुरुषार्थ से परम विजेता का जीवन जी सकता है। आवश्यकता है अपने आपको, अपनी क्षमताओं को जानने, जगाने और व्यवहार में लाने की।

मैं क्रान्ति का पक्षधर हूं परन्तु ऐसी क्रान्ति का नहीं जो हिंसा व बल प्रयोग से दूसरों को बदलने को मजबूर करती हो। मैं ऐसी क्रान्ति का पक्षधर हूं जो स्वयं मनुष्य को अपने आपको, अपनी जीवन शैली को, ठोस विचार कार्य पद्धति में अपने व मानवता के कल्याण के लिये बदलाव लाती हो और ऐसी क्रान्ति निश्चित तौर से मनुष्य के विवेक के जागरण द्वारा ही लाई जा सकती है।

जगाने की चेष्टा—दलित क्रान्ति दर्शन मैं अपने करोड़ों दलित साथियों को झकझोर कर जगाने के एक विनम्र प्रयास के रूप मे प्रस्तुत कर रहा हूं क्योंकि मेरी आत्मा पूरे संकल्प के साथ मुझे बार-बार इस बात का विश्वास दिलाती है—

"जागेगी एक दिन सोई हुई सर्वहारा जन शक्ति आवश्यकता है उसे झकझोर कर जगाने की ओर यदि एक बार यह जनशक्ति जग गई तो दुनिया की कोई भी शक्ति जनक्रान्ति को रोक नहीं पायेगी।

क्रान्ति से निकलेगा भारत में एक नये विकास का सूर्य, जो जन-जन को प्राण का उजाला देगा। न फिर कोई भूखा नंगा रहेगा और न किसी को अछूतपन की पीड़ा सहनी पड़ेगी। किसी भी भारतीय को गैर नहीं समझा जायेगा। सब जियेंगे सबके लिये समता, न्याय और समृद्धि का सवेरा आयेगा।"

इस पुस्तक के साथ मैं आपका आह्वान् करता हूं—

"अरे जागो। मेरे शोषित, अपमानित, असुरक्षित साथियों, सब मिलकर एक दूसरे की ढाल बन जाओ। इस तरह जीना भी कोई जीना है। इससे तो सत्याग्रही बनकर कष्ट झेलना अच्छा है।

तुम जागो, संघर्ष करो, सत्याग्रह को तैयार हो जाओ। रोने के सिवाय तुम्हारे पास बेड़ियों के कुछ भी नहीं है। सच्चाई और न्याय के लिए मर भी गये तो शोषण के इस नर्क से छुटकारा होगा। तथा जीत गये तो सम्मान की जिन्दगी जीने का अवसर मिलेगा।

अब मत बनो बोझ इस धरती पर। इसे या तो असमानता और अन्याय से मुक्त करो। या 'स्वयं शोषण एवं अन्याय में मुक्त हो जाओ।"

आपसे क्रान्ति के लिये तैयार होने का आग्रह मैं इस कारण से कर रहा हूँ कि भारत मे जाति-विहीन, वर्ग-विहीन, रूढ़िवादिता विहीन, समता मूलक प्रजातन्त्रीय समाजवादी समाज की संरचना करना दलित वर्ग के लिये जीवन मरण का प्रश्न हो गया है। यदि हम ऐसा नहीं कर सके तो हमारा अस्तित्व ही खतरे में नहीं पड़ेगा बल्कि हमारे देश की एकता अखण्डता एवं गरिमा की रक्षा करना भी असम्भव हो जायगा। आज भले ही हमारे अनेक दलित साथी अपनी शक्ति का अनुमान नहीं लगा पा रहे हो परन्तु 2 वी सदी के आरम्भ मे उठने वाली सर्वहारा जनक्रान्ति का नेतृत्व दलित शक्ति ही करेगी ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। आपको आने वाले कल के लिए ज्यादा सक्षम ज्यादा सगठित और ज्यादा शक्तिशाली होते देखना चाहता हूं। आपकी जिम्मेदारियां आपके अपने कल्याण के लिये, अपने परिवार एवं समाज के लिये, तथा इस देश के तमाम साधन विहीन सर्वहारा गरीबों, मजदूरों, महिलाओं और अल्प संख्यकों के लिये और अपने प्यारे भारत देश को बचाने और समृद्ध करने के लिये, बार-बार आपको आग्रह कर रही है कि जागो, उठो और संगठित होकर कुछ करो।

कुछ करो अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिये, इस देश को शोषण, अनाचार व अन्याय से बचाने के लिये, अरे कुछ करो, भारत की एकता अखण्डता एव गरिमा की रक्षा के लिये, क्योंकि आज कट्टर साम्प्रदायिकता, अलगाववाद और हिंसा का जहर, हमारे प्यारे देश और देशवासियो को, निगलने को मुंह फैला रहा है।

आगामी जनक्रान्ति की झलक—आने वाली क्रान्ति की एक झलक मैंने अपनी हाल ही प्रकाशित पुस्तक 'विवेक क्रान्ति दर्शन' की प्रस्तावना में प्रस्तुत की है, उसे आपके समक्ष पुनः प्रस्तुत कर रहा हूं।

"भारतीय सर्वहारा जनक्रान्ति इक्कीसवी सदी के आरम्भ में उठने वाली भारतीय इतिहास की सबसे बड़ी जनक्रान्ति होगी।

सर्वहारा जनक्रान्ति के परिणामस्वरूप भारतीय जनता मे राष्ट्रीयता की भावना का प्रचुर मात्रा मे विकास होगा। भारतीय स्वस्थ समाज की रचना होगी। भारत में व्याप्त सामाजिक बुराइयों, जातिवाद, साम्प्रदायिकता, पूंजीवाद रुढ़ीवाद तथा अलगाववाद का अन्त होगा।

संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चा जाति विहीन, वर्ग विहीन, वैज्ञानिक, मानवीय सद्भावनायुक्त, समता मूलक, प्रजातान्त्रिक समाजवादी समाज का निर्माण करेगा।

समाज मे प्रत्येक भारतीय को बिना जाति धर्म भाषा क्षेत्रीयता व लिंग का भेद किये, विकास के समान अवसर मिलेंगे।

'एक सबके लिये और सब एक के लिये' का आदर्श समाज स्थापित करेगा। प्रत्येक भारतीय की गरिमा की रक्षा होगी तथा चहुंमुखी विकास का सभी को समान अवसर प्राप्त होगा। हर हाथ को काम मिलेगा तथा सभी को जीवन की मूल-सुविधायें मिलेगी।

जातिवाद, साम्प्रदायिक दुर्भावना, पूँजीवाद अंधविश्वास एवं रूढ़िवाद का अन्त कर, एक स्वस्थ भारतीय कौम को जन्म दिया जायेगा। जो ज्यादा जीवंत सक्रिय, मानववादी कौम होगी। जो भारत की महिमा और गरिमा को विश्व मे स्थापित करेगी तथा विश्व मे व्याप्त हिंसा, रंगभेद, जातिभेद, साम्प्रदायिक विद्वेष को समाप्त कर, विश्वशान्ति स्थापित करेगी। सारा मानव समुदाय एक परिवार की तरह रहे इसका नवीन भारतीय समाज प्रयास करेगा।

हमारे आदर्श होंगे—(1) प्रजातन्त्र (2) मानववाद (3) विज्ञान वाद (4) धर्म निरपेक्षता (5) नारी सम्मान और (6) समाजवाद।

बड़ी जिम्मेदारियां एवं गम्भीर चुनौतियां— आप इस बात को अच्छी तरह समझ लें कि आपका उद्धार करने के लिये कोई अलौकिक शक्ति नही आने वाली है। धनवान एवं साधन सम्पन्न लोगों से अपने उद्धार की आशा मत लगाकर बैठना वे कभी नहीं चाहेंगे कि आप लोग दीनता, दरिद्रता और अज्ञान से मुक्त होकर, ऊपर उठें क्योंकि वे ही तो आपके श्रम एवं सुविधाओं का शोषण करते है।

आपका उद्धार केवल सरकारी संरक्षण एवं सुविधाओं की बैसाखियो के सहारे चलकर भी सम्भव नहीं हो सकता है हां, यह खतरा अवश्य है कि आरक्षण, सुविधा एवं संरक्षण की बैसाखियां आपके पैरों को ही पंगु न बना दे। सचेत हो जाओ, आपका कल्याण करने कोई नही आयेगा। आपका उद्धार तो आपके संगठन संघर्ष द्वारा ही होगा, अन्य कोई उपाय ही नहीं है।

आपकी दुरावस्था, गरीबी एवं शोषण के लिये आप ही जिम्मेदार हैं।

आपको इस सच्चाई को तुरन्त स्वीकार कर लेना चाहिये कि आपके अपमान, असुरक्षा, शोषण और उत्पीड़न का कारण कोई और नही स्वयं आप हैं। आपके अज्ञान, भय, फूट, अंध-विश्वास भाग्य और भगवान की मिथ्या धारणाओं ने ही आपको मनुष्य की गरिमा से पशु के स्तर तक नीचे गिरा दिया है।

आप निम्न स्तर के है क्योंकि आपने अपने इसी स्तर को अपनी नियति, भगवान की कृपा, कर्मों का फल, न जाने क्या-क्या मान लिया है। आपकी हीनता की ग्रन्थी हर समय आपको कुंठाओं, निराशाओं एवं दुखों से घेरे रहती है। आप दूसरों के अन्याय व अनाचार को भी भाग्य का खेल मानकर झेलते हो। अपमान की पीड़ा आपको, अपने पुराने जन्मों का फल प्रतीत होती है। आपके सामने अनाचार होता है। आपकी पत्नी या पुत्री को कोई पीटता रहता है और आप भक्षक से दया की भीख मांगते हो। सोचिये कि क्या आप सच्चे अर्थों में मनुष्य हैं ?

अन्याय करने वालों से, ज्यादा दोषी अन्याय को सहन करने वाला होता है। अन्याय को सहन करने की दुष्प्रवृत्ति के कारण ही समाज में अव्यवस्था, अनाचार, भ्रष्टाचार आतंकवाद, अलगाववाद एवं अपराधिक प्रवृत्तियों का जन्म होता है। इन्ही प्रवृत्तियों से दलितों का शोषण होता है तथा देश की एकता और अखण्डता को खतरा उत्पन्न होता है।

अन्याय होता ही इसी कारण है कि आप उसे चुपचाप सहन करते है। इसी से आपका शोषण करने वालों के होसले बुलन्द होते हैं। जिस समय आप आत्म ज्ञान, आत्म शक्ति सौर्य से भरपूर होकर, भय रहित होकर पूरे संकल्प के साथ अन्याय से लड़ने मरने को तत्पर हो जायेंगे, आपके जीवन मे क्रान्ति घटित हो जायेगी।

अन्याय करने वाले की आत्मा कमजोर होती है वह किसी सत्य निष्ठावान, चरित्रवान, शक्ति से भरपूर, ब्यक्ति के सामने कभी नही ठहर सकती। जगाओ अपने संकल्प को, खोजो अपने अन्दर की शक्ति को, वर्ग चेतना को जगने दो, फिर दुनिया की कोई शक्ति तुम्हें अन्याय, शोषण व अनाचार का शिकार नही बना सकेगी।

आपके सामने अपने आत्म-कल्याण, परिवार की सुव्यवस्था, समाज की जागृति व देश निर्माण की बड़ी-बड़ी जिम्मेदारिया है। इन जिम्मेदारियो का निर्वाह करने के लिए, अपने आपको सक्षम बनाओ, जागो उठो, सोचो विचारो और आत्म

निरीक्षण कर, अपने को अज्ञान भय व भ्रांत धारणाओं से मुक्त करो, तभी आप व्यक्ति की गरिमा को उपलब्ध हो सकते हो।

यदि आप गरिमावान व्यक्ति बनना चाहते है, अपने दीन, दरिद्र साथियों को अनाचार शोषण व अपमान से ऊपर उठाना चासते हैं, चाहते हैं कि दलित शक्ति उभरे और एक महान जन आन्दोलन का नेतृत्व करें तो आपको गम्भीर चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार होना होगा।

आपके सामने सबसे बडी चुनौती तो स्वयं की भ्रांत धारणाओ को तोड़ने की होगी। आपको अपने जीवन से ऐसे कार्य, विचार व व्यवहार को निकाल फैंकना होगा जो आपको गरीबी, निकृष्टता व शोशण के नर्क मे धकेल रहा है।

आपको यह भी सोचना होगा कि जिस धर्म, समाज व व्यवस्था के आप अंग है क्या वह शोषण की पर्याय नही है ? क्या आप सोच सकते है कि आपके साथ होने वाले हर अन्याय व अनाचार की जड़ जाति व्यवस्था है ? क्या आप इस तथ्य को स्वीकार नही करेंगे कि जाति व्यवस्था का मूल वर्ण व्यवस्था है ? क्या आप इस सच्चाई से इन्कार कर सकते है कि वर्ण व्यवस्था का मूल हिन्दू धर्म है ? क्या आप इस सच्चाई से आखें चुरा सकते है कि हिन्दू धर्म का मूल उनके शास्त्र, प्रथायें व अंध विश्वास है ?

सोचिये गम्भीरता से कि क्या आप हिन्दू बने रहकर, अपमान सूचक जाति नामों से, भेदभावों से, जिल्लत व अपमान से अपना पिण्ड छुड़ा सकते हैं ? मेरा तो स्पष्ट मानना है कि यह कभी सम्भव नही है और इसी कारण लम्बे सोच विचार के बाद बाबा साहब ने हिन्दू धर्म व समाज व्यवस्था को तिलान्जलि देकर, मानवीय समानता के आदर्श को, स्थापित करने वाले, महान बौद्ध धर्म को ग्रहण किया।

मैं आपके सामने प्रश्न खड़े कर रहा हूं आप इन प्रश्नो पर गम्भीरता से विचार करें, हठ धर्मिता, हीनता और अकर्मण्यता त्याग कर, आत्मा की गहराईयों तक इन प्रश्नों को उतरने दें, इतना मैं दावे के साथ कहता हूं कि आपकी अन्तरात्मा इन सारे प्रश्नों का जवाब देगी। आपका विवेक आपका मार्गदर्शन करेगा। आपका विवेक ही दिशा देगा कि आपको महिमावान व्यक्ति बनने के लिये, दलितोद्धार के लिये तथा राष्ट्रीय नव निर्माण के लिए क्या करना है ? और जब एक बार आप अपने विवेक को जगाने, जानने और उसके अनुसार जीने का संकल्प ले लेंगे तो आपके अन्दर विवेक क्रान्ति घटित हो जायेगी।

यह मैं अच्छी तरह महसूस करता हूं कि आप देश व समाज की इतनी बड़ी-बड़ी जिम्मेदारियों का निर्वाह तब तक नहीं कर सकते जब तक कि आप सक्षम न बनें। पहले तो आपको अपनी समस्याओं का गहराई से अध्ययन करना होगा। उनके निराकरण के उपाय ढूंढकर उनका समाधान करना होगा। उसके बाद अपने जीवन के आदर्श को सुनिश्चित करना होगा, तभी आप देश व समाज के लिए कुछ कर सकेंगे।

आपकी समस्याओं के विवेक संगत विश्लेषण, समाधान के वैज्ञानिक उपाय एवं एक सुनिश्चित आदर्श को स्पष्ट करने के लिये, आप में विचार क्रान्ति पैदा करने के लिए, ही मैं दलित क्रान्ति का विवेकत्रयी सिद्धान्त प्रस्तुत कर रहा हूं। पहले संलग्न तालिका का गहराई से अवलोकन करें तथा बाद में उसे गहराई से समझने का प्रयास करें।

दलित क्रान्ति का विवेकत्रयी सिद्धान्त

		1	2	3		
समस्या त्रयी	1	अशिक्षा	गरीबी	शोषण	1	वर्ग चेतना
समाधान त्रयी	2	शिक्षा	संगठन	संघर्ष	2	वर्ग संघर्ष
उद्देश्य त्रयी	3	प्रजातन्त्र	राष्ट्रीयता	समाजवाद	3	लोक शक्ति जागरण
		1	2	3		
योग		विवेकानन्द	विज्ञानवाद	मानववाद		समता मूलक समाजवाद

——

अध्याय सात

समस्या त्रयी - वर्ग चेतना

"वर्ग चेतना" दलित क्रान्ति दर्शन का प्रमुख एवं प्रथम सूत्र है। इस सूत्र के तीन उप सूत्र (1) अशिक्षा (2) गरीबी और (3) शोषण है। इन सूत्रों का समुच्चय वर्ग चेतना सूत्र के नाम से जाना जायेगा। यह सूत्र दलित क्रान्ति के विचारों को जन जन तक पहुँचा कर वर्ग चेतना की प्रबल भावना को जन्म देगा।

दलित वर्ग की सबसे बड़ी समस्या उनमे एकता के अभाव की है। हिन्दुस्तान की कुल आबादी का करीब 30 प्रतिशत भाग अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति, घुम्मकड़ एवं आदिवासी जन समूह का है। इनके साथ यदि पिछड़े वर्ग की आबादी को भी मिला दिया जाये तो आधी जनसंख्या सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े एवं निम्न दलित भारतीयों की है। देश की समस्त महिलायें भी सामाजिक दृष्टि से पुरुषो से हेय समझी जाती है तथा आर्थिक रूप से वे पुरुषों पर निर्भर है। यदि साधन विहीन, श्रमजीवी शोषण के शिकार, सर्वहारा व्यक्ति को दलित माना जाये, तो यह आज के सन्दर्भ मे कोई अतिशयोक्ति नही होगी।

जो कोई भी व्यक्ति, चाहे उसका जन्म किसी जाति में हुआ हो, कोई धर्म वह मानता हो, स्त्री हो या पुरुष, साधन विहीन होने के कारण गरीबी और शोषण का शिकार है। वह सर्वहारा वर्ग का है। भारतीय सन्दर्भ में उसे दलित या पिछड़ा व्यक्ति कहा जा सकता है। इस तरह से यदि हम विचार करते हैं तो पता चलता है कि इस देश में आज स्पष्ट दो ही वर्ग व जातियां है। एक साधन सम्पन्न पूंजीपति शोषक वर्ग की जाति और दूसरी समस्त गरीब अभाव ग्रस्त एवं शोषण के शिकार सर्वहारा दलितो एवं गरीबों की जाति।

साधन सम्पन्न सर्वहारा जनता की संख्या 90 प्रतिशत है जबकि शोषक मुश्किल से 10 प्रतिशत ही है। देश की भूमि, सम्पदा, कल कारखाने एवं उत्पादन

के समस्त श्रोतों पर साधन सम्पन्न शोषक पूंजीपतियों ने अपना कब्जा जमा लिया है तथा धन के बल पर वे राजनीति पर हावी हैं। सारा धर्म संस्कृति और कानून व्यवस्था पर पूंजीपति वर्ग का कब्जा है। इसी कारण धर्म, कानून व सत्ता हमेशा ही पूंजीपति शोषकों का समर्थन करती है। शोषक पूंजीपति वर्ग के लोग धर्म सत्ता, अर्थ सत्ता और राज सत्ता के बल पर गरीबों का शोषण करते है।

यदि सर्वहारा साधन विहीन दलित एवं पिछड़े वर्ग के लोगों को अपने जीवन को खुशहाल बनाना है तो उन्हें धर्म सत्ता, अर्थ सत्ता एवं राज्य सत्ता पर संगठित संघर्ष, जन आन्दोलन व मताधिकार द्वारा कब्जा करना होगा। अन्य कोई उपाय उनके उद्धार का नही है।

दलित वर्ग के लोग अनेक जातियों में बंटे हुये है। कोई भी दलित जाति का व्यक्ति अपने से भिन्न दूसरी दलित जाति से समय के साथ सम्पर्क नहीं रखता है। एक दलित जाति का व्यक्ति पिटता रहे, शोषण का शिकार होता रहे, उसके दूसरे साथी तक उसे बचाने को नहीं दौड़ पड़ते। हर दलित जाति अपने आपको दूसरी दलित जाति से ऊँचा सिद्ध करने की घृणित चेष्टा करती है। एक जाति के लोगों में भी आपस में कोई मेल मिलाप नही है। कितनी फूट है? कितनी दरिद्रता है? कितने अन्ध विश्वास हैं? क्या आप सब स्थितियों को बैठे देखते नहीं रहते है? यदि हां तो फिर क्या उम्मीद रखते हैं दूसरों से।

पहले अपनी चेतना को जगाओ। पीड़ा को महसूस करो। अपनी समस्याओं को खोजो। कहाँ तक आप स्वयं उसके लिये उत्तरदाई है इसका पता लगाओ, तभी आप समस्याओं के निदान के बारे में सोच पायेंगे। अपनी चेतना को जगने दें।

मुझे यह कहते हुये अत्यधिक पीड़ा होती है कि अनेक पढ़े लिखे दलित साथी भी अपने साथ अस्पृश्यता के व्यवहार को आज भी निरन्तर बर्दाश्त करते हैं। यहा तक कि स्कूलो के अध्यापक, कार्यालयो के लिपिक, पुलिस के सिपाही तक स्कूलों, कार्यालयो एवं सरकारी कार्य स्थलों पर सबके लिए रखे पानी के मटकों से पानी नही पी सकते।

खून मर गया है लोगों का। स्वाभिमान और आत्मीय गरिमा तो उनमें है ही नही। आज अस्पृश्यता निवारण के लिये सरकार ने कठोर कानून बनाये हैं, दलितों पर अत्याचार रोकने के लिए अभी हाल ही अनुसूचित जाति/जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989 में पारित हुआ है। जिसके अधीन विशेष

न्यायालयों का गठन किया गया है। एक छोटी सी दरख्वास्त पर पुलिस, प्रशासन एवं न्याय तन्त्र सक्रिय हो जाता है। परन्तु कायरों, नपुसंकों एवं मुर्दों को स्वाभिमान की परवाह ही नही है। उन्हें इस देश व समाज की चिन्ता ही नही है। वे तो केवल अपनी जान को, डर कर, भयभीत होकर, पिट-पिटाकर बचाने की चेष्टा मे हैं फिर भी आज तक सुरक्षित नही हो सके।

अपने अन्दर आत्म-चेतना को जगाये। अपनी पीड़ा को महसूस करें। अन्याय की सौ वर्ष की जिन्दगी से तो गरिमा का एक क्षण महत्वपूर्ण है।

अपनी समस्याओं पर गौर करें। मैं यह भी निवेदन करना चाहता हूँ कि सभी स्थानों पर, सभी लोगो की समस्याएं भिन्न-भिन्न हैं। आपकी समस्याओं को आप ही समझ सकते हैं और आप ही उसका समाधान भी कर सकते है।

दलित वर्ग की भिन्न-भिन्न स्थानो पर भिन्न-भिन्न समस्याएं हैं परन्तु अध्ययन की दृष्टि से इन समस्याओ को मोटे तौर पर तीन भागो मे बाटा जा सकता है:-

(1) अशिक्षा
(2) गरीबी
(3) शोषण

अशिक्षा : दलितो की सारी समस्याओं का मूल अशिक्षा एवं अज्ञान है। हालांकि आजादी के बाद शिक्षा के क्षेत्र मे निरन्तर विकास हो रहा है परन्तु आज भी निरक्षरता का अधिकांश प्रतिशत दलित स्त्री-पुरुषो का ही है।

बिना पढ़े लिखे लोगों का गांवों में जो शोषण हो रहा है उसे हम सभी जानते हैं। अशिक्षित और अनपढ़ व्यक्ति ही अन्ध विश्वास एवं रूढ़ियों के शिकार हैं। आज भी गांवों में अशिक्षित घरों मे जब कोई व्यक्ति बीमार पड़ता है तो लोग चिकित्सक के पास जाकर इलाज कराने की बजाय झाड़ फूंक वालों के चक्कर मे फंस जाते हैं, गण्डे व ताबीज बंधवाते हैं, देवी-देवताओं की मनौती करते है और चाल बाज लोगों द्वारा ठगे जाकर, रोगी को मौत के मुंह मे जाने देते हैं तथा फिर इस समस्या को उन्ही जाल साजों के समझाने पर, भाग्य का खेल मानकर सन्तोष कर लेते हैं।

अशिक्षित दलित भाई कठोर मेहनत मजदूरी करते हैं। दूसरों के खेतों को जोत बोकर अन्न पैदा करते है। उन्हें उनकी मेहनत का बहुत थोड़ा भाग ही मिल

पाता है। उसे भी वोहरे, सेठ, सामन्त, कर्ज की वसूली के रूप में छीन ले जाते है। वे मृत्यु भोज, शादी विवाह और धर्म कर्म अवश्य करते है। वह भी कर्ज लेकर। कर्ज कितना लिया उन्हें पता नहीं। वे तो बस अगूठा करना जानते हैं।

कर्ज देने वाले को अन्नदाता मानते है। चाहे भले ही उन्हें थोड़ा रुपया देकर कोई उनका घर, मकान, खेत किसी के भी नाम करालें, उन्हें पता ही नही चलता। वे हर फसल पर कर्ज चुकाते भी हैं। पर उसकी कोई रसीद उन्हें नही दी जाती है। पीढ़ी दर पीढ़ी वे कर्ज में डूबे रहेंगे। कर्ज वसूली के नाम पर पिटते रहेंगे। इनकी स्त्रियों के साथ अनाचार होता रहेगा। फिर भी वे कुछ नही कर सकेंगे। क्योंकि वे अनपढ़ है। उन्हें कानून, न्याय कचहरी किसी बात का भी तो ज्ञान नही है। फिर सारे दुःखो पर सन्तोष करने का, उनके पास उपाय, भाग्य का खेल, प्रभु की लीला, पापों का फल है।

मैं अपने अनुभव से रोज यह देखता हूं कि जब किसी दलित भाई की जमीन दबा ली जाती है, उनके साथ मारपीट होती है। तो न्याय के लिते वह उन्ही अनाचारियों के दरबार मे गिड़गिड़ाता है। यदि साहस कर थाने भी जाता है तो कोई उनकी रिपोर्ट नही लिखता। वह अपने साथ जब किसी साधन सम्पन्न पंच, चौधरी, ठाकुर आदि से न्याय की दुहाई देता है तो पैसे का प्रश्न खड़ा होता है। वह हिमायती व्यक्ति ही उसका खेत गिरवी रखकर पैसे देता है। गिरवी के नाम पर बेचान लिख लेता है। कचहरी मे आकर वह व्यक्ति उसके ऊपर अहसान भी करता है। तथा वकीलों से अपने हक की दलाली भी ले लेता है। पुलिस एव प्रशासन के साथ भी यही खेल चलता है। सब कुछ होता है पर उस अन्याय से पीड़ित को न्याय नही मिलता क्योंकि वह अशिक्षित है। अशिक्षित व अनपढ़ लोगों को लोग स्वर्ग का प्रलोभन देकर भी ठगते रहते हैं। धन दूना करने वाले शोक हरने के मन्त्र और तावीज बनाने वाले। स्वर्ग की सीढ़ियां गढ़ने वाले, पता नही कितने कितने प्रकार के धूर्त, मक्कार लोग इन अनपढ़ लोगो को रोज ठगते रहते है।

अशिक्षा और अज्ञान के कारण दलित वर्ग के लोग शोषण, अन्याय व अत्याचार का शिकार होते हुये भी, उन शोषको के विरुद्ध संघर्ष की भावना पैदा नही कर सके क्योंकि शोषको ने उनके मन में बिठा दिया था सब कुछ कर्मों का फल है तो भोगना ही होगा। जो आज ऊंची जाति, ऊंचे कुल में पैदा हुये है, शासन और सुख का भोग कर रहे हैं उन्होने पुराने जन्मो में बहुत सत्कर्म किये है,— तभी उन्हें ऊंची स्थितियां मिली है तथा तुमने अवश्य पाप किये होंगे इसी कारण

तुम दुख भोग रहे हो। हमारी सेवा करके पाप दूर कर लो ताकि अगले जन्म में तुम्हें भी ऐसे सुख मिल सके।

उन्हें यह भी समझा दिया गया है कि मनुष्य के किये कुछ नहीं होता। मनुष्य का भाग्य तो विधाता ने उसके जन्म के साथ ही लिख दिया है। अतः वही होगा जो तुम्हारे भाग्य मे लिखा है। उसे मिटाने वाला कोई नही। अब आप सोचिये कि भाग्य को मानने वाला क्यों पुरुषार्थ करेगा। उससे तो कोई जबर-दस्ती बेगार से तो ही काम करेगा। नहीं तो भाग्य के भरोसे भूखा ही मर जायेगा। जूते भी खायेगा व अनाचार भी सहेगा। इस भाग्यवाद के सिद्धान्त ने दलितों का सबसे ज्यादा अहित किया है परन्तु ताज्जुब की बात तो यह है कि दुनियां भर की तृष्णा मे डूबे लोग पढ़ लिख कर भी भाग्यवादी हैं। इससे ज्यादा घोर अज्ञान क्या हो सकता है?

दलितो की यह भी मिथ्या धारणा अत्यधिक है कि कोई अलौकिक देवी देवता की पूजा करते रहो, वही बेड़ा पार लगायेगा। सदियों के अनुभवों से भी लोगो का यह मिथ्या भ्रम दूर नही हुआ है। जिसमे ज्यादा धार्मिक ढोंग के शिकार दलित है, उतना कोई नही। यहां तो ठेके पर भी धार्मिक अनुष्ठान कराने का रिवाज है। किसी चतुर मिथ्याचारी के जाल मे फंसकर, लोग धन देते हैं और अनुष्ठान कराकर सोचते है कि अब उनके यहां न कोई मृत्यु होगी, न नुकसान होगा। ऐसे-ऐसे लोग बैठे हैं कि चाहे बेटी की शादी की चिन्ता हो, चाहे लड़के को नौकरी लगाने का प्रश्न हो, चाहे बीमारी दूर करने का उपाय हो, हर समस्या का समाधान तन्त्र-मन्त्र से कर देने का दम्भ भर कर, लोगों को गुमराह कर ठगते हैं और ऐसी ठगाई का शिकार अशिक्षित ही नही, पढ़े लिखे दलित भाई भी होते हैं।

दलितों के पास अपना स्वयं का कोई सोच विचार नही है। उनके सामने जीवन के स्पष्ट लक्ष्य नही हैं। वे शोषकों की बनाई रीतियों-नीतियों पर चलते रहकर ही अपना कल्याण चाहते हैं। यह कभी सम्भव नही होगा। अपने विवेक को जगाना होगा। मानवीय जीवन मूल्यो पर आधारित एक ऐसी संस्कृति का उन्हें निर्माण करना होगा, जिसमे कि उन्हें अन्य नागरिको के समान आदर, विकास के अवसर तथा आर्थिक साधन उपलब्ध हों। अशिक्षित रहकर एक तरह से हम शोषण की व्यवस्थाओं का साथ दे रहे है।

हमारी आत्महीनता का मुख्य कारण अशिक्षा है। अशिक्षा और अज्ञान के कारण हम अपनी समस्याओं को समझ नही पाते, उनके समाधान ढूंढ नहीं पाते। हमारे अन्दर स्वाभिमान आत्म-विश्वास एवं पुरुषार्थ की कमी है। सारी समस्याओं की जड़ ही है अशिक्षा।

हीनता हमारा मूल स्वभाव नही है यह हम पर जबरदस्ती थोपी गई है। शिक्षित और बुद्धिमान होकर ही हम हीनता के बोझ से मुक्त हो सकते हैं।

गरीबी--गरीबी सारे दुखों की जननी है। साधन विहीन व्यक्ति कभी भी स्वाभिमान की जिन्दगी नहीं जी सकता। गरीबी से दीनता, रोग और दरिद्रता, का जन्म होता है। व्यक्ति अपना पेट भरने के लिए भीख मांगने, अपराध करने या कोई भी अनैतिक अपराधिक कृत्य करने से नही चूकता। गरीबी आदमी से वह करवा लेती है, जो आदमी नहीं करना चाहता।

जो व्यक्ति साधन विहीन है, दूसरों के यहां मजदूरी करके ही उसका गुजारा होता है वह अपने मानवीय अधिकारों की रक्षा किस बल बूते पर कर सकता है गरीब व्यक्ति न तो पौष्टिक भोजन, खा सकता है न ही अच्छे मकान बना सकता है और न ही उसके बच्चे शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

गांवो में ऐसी घटनाएँ दलित वर्ग के लोगों के साथ होती रहती है कि जब भी कोई साधन विहीन दलित स्वाभिमान से जीना चाहता है; दूसरो की गुलामी से इन्कार कर देता है तो लोग उसे मजदूरी पर नही रखते, खेतो में शोच आदि को नहीं जाने देते, उनके रास्ते बन्द कर देते है आखिर विवश होकर उन्हें पुनः पराधीनता की जिन्दगी जीनी पड़ती है।

दलित साथियों को यह बात निश्चित रूप से जान लेनी चाहिये कि गरीबी न तो भाग्य का खेल है और न ही परमात्मा की लीला। न ही गरीबी उन्हें कर्मो के फल भोगने को मिली है। उनकी गरीबी इसलिये है कि कुछ लोगो ने देश की धन, धरती व सत्ता को जबरदस्ती हथिया लिया है।

इस देश की सम्पूर्ण धरती पर, देश की अर्थ व्यवस्था पर, कृषि व कल-कारखानों पर भी भारत की निर्धन जनता का भी उतना ही अधिकार है जितना किसी साधन सम्पन्न व्यक्ति का है। सभी ने भारत माता की कोख से जन्म

लिया है। सभी भारत माता के लाल हैं। माँ की सम्पदा पर उसके सभी बेटों का समान हक व अधिकार है।

निर्धनों को दीन दलितों को, अपने अधिकारों के लिए लड़ना ही होगा। मागने से यहां कुछ भी नहीं मिलता कोई भी सरकार तब तक गरीबी व शोषण नही मिटा सकती जब तक कि गरीब और शोषित अपने अधिकार के लिये लड़कर मर मिटने को तत्पर न हों।

गरीबी के लिए मौजूदा पूंजीवादी ढांचा दोषी है इस ढांचे को आमूल चूल बदले बिना दलित गरीबी की समस्या से नही उभर सकते।

अपनी गरीबी के लिये स्वयं दलित व्यक्ति भी कम जिम्मेदार नही हैं। उनमे पुरुषार्थ का अभाव है। 'संकल्प की कमी है तथा उनके अन्दर आर्थिक नियोजन की समझ बिल्कुल ही नही है। उन्हें ना तो ढग से कमाना आता है न ही उनके पास तकनीकी, औद्योगिक ज्ञान है। वे कमाते भी है तो उसे दान, दहेज, मृत्यु-भोज एवं नशे पर खर्च कर देते है। बचत करना तो उन्हें आता ही नही। बच्चो की फौज भी बढाते जायेंगे तथा गरीबो के लिये रोना-धोना भी मचाते रहेंगे।

जो लोग शाम ढले शराब खाने की ओर मुड़ जाते हों, जिन्हे बीबी की इज्जत और बच्चों की भूख की भी परवाह न हो। कौन दूर करेगा उनकी गरीबी?

जो लोग कर्ज मे डूबे हुए रहकर भी मा-बाप की मृत्यु का जश्न मनाने के लिये, कर्ज लेकर भी मृत्यु भोज कर, बिरादरी में अपने बाप का नाम रोशन करने पर तुले हैं, उनकी गरीबी कैसे दूर हो सकती है? कैसे लोग कर्ज के रोग से मुक्त हो क्योंकि उन्हें तो दहेज अपने पड़ोसी से अधिक देना है? नही तो बिरादरी मे उनकी नाक कट जायेगी अब नाक ही रखेंगे ऊँची तो फसे वो ही कर्ज के जाल में।

जो छोटी-छोटी बातों पर अपने ही भाईयो से लडते हों। उन्हें कोर्ट कचहरी में ले जाने के लिये तुले हों। मुकदमेबाजी के शौकीन हों वे भला कैसे गरीबी के दुश्चक्र से बचेंगे।

कोई फिजूल खर्ची से बचने का उपाय भी करे तो बिरादरी की मर्यादायें

टूटती है। बिरादरी के ठेकेदार भला कैसे ये बर्दाश्त कर सकते हैं? मैंने अपनी आंखों से देखा है कि जवान कमाऊ व्यक्ति की घर में मौत हो जाती है, उसकी विधवा पत्नी और अनाथ बच्चे अपने अंधकारमय भविष्य के लिए रोते हैं परन्तु जाति के तथाकथित पचों को उन पर तरस नही आता। उस मृत व्यक्ति की आत्मा को जबरदस्ती स्वर्ग पहुंचाने के लिये, उन अनाथ बच्चों और विधवा के हक की जमीन तक बिकवा देते हैं, लोग। वे कैसे निर्दयी लोग हैं जो मुर्दों की लाश पर शोक मनाने की बजाय उनके परिवार को तबाह कर, मृत्यु भोज कराते हैं। क्या मृत्यु भोज शोषण के रक्त से कम है। यदि दलितों को दरिद्रता से उबारना है तो ऐसी घृणित प्रथाओं, फिजूल खर्ची और व्यसनों पर शक्ति से रोक लगानी होगी।

दलितों की गरीबी का कारण है उनमे पुरुषार्थ का अभाव। दलित इस देश की धरती पर स दियों से शोषण के शिकार हैं वे सदा ही अपने कल्याण के लिये दया की भीख मांगते आये हैं। फिर भी उनका उद्धार नहीं हुआ है। उन्हे किसी शरणार्थी भाई से पुरुषार्थ की सीख लेनी चाहिए। वे शरणार्थी बड़ी आपदा मे खाली हाथ भारत आये थे। उनके घर उजाड़ दिये गये थे। उनके परिवार वालों की हत्यायें हो गई थी। उन बहादुर लोगों ने भारत में आकर अपने पुरुषार्थ, कड़ी मेहनत व आत्म विश्वास से, अपनी जड़े जमाई। उन्होने किसी से दया की भीख नहीं मांगी और आज अपने ही परिश्रम से सम्पन्नता की जिन्दगी व्यतीत कर, देश की सेवा कर रहे हैं।

पुरुषार्थ के द्वारा, संकल्प शक्ति द्वारा, कठोर मेहनत करके, कोई भी व्यक्ति दरिद्रता के चुंगल से मुक्त हो सकता है। आपको प्रकृति ने सम्पूर्ण शक्ति से भरपूर बनाया है। अपनी शक्तियों को जगाइये। कड़ी मेहनत व लगन से अपने जीवन को सुखी और सम्पन्न बनाइये। आज कोई बाधा नही है कोई निर्योग्यता नही थोपी जा रही है आपके ऊपर। सरकार भी आपके विकास को सक्रिय है। अवसर का लाभ उठाइये। अपनी गरीबी स्वयं दूर करिये।

शोषण—दलित समाज की तीसरी समस्या शोषण की समस्या है। शोषण का कारण अशिक्षा और गरीबी है। अशिक्षा और गरीबी का कारण जाति भेद है तथा जाति भेद का कारण है वर्ण व्यवस्था और वर्ण व्यवस्था का कारण हिन्दू समाज व धर्म का ढाचा है। समस्या घूम फिर कर यही है कि हिन्दू समाज में रहते क्या उनकी समस्याओं का निदान सम्भव है?

दलितों की धार्मिक समस्या तो ये है कि वे जिस धर्म को मानते हैं उसी धर्म के अनेक साथी उनके साथ घृणा एव अस्पृश्यता का व्यवहार करते हैं। जिन शास्त्रों में उनकी आस्था है वे ही शास्त्र उनको नीचा समझने प्रताड़ित करने तथा शिक्षा एवं अधिकार से वंचित रखने की भावनाओं का समर्थन करते हैं। जिन देवी-देवताओं और भगवानों को अपना आराध्य मानते है। उन्हीं के मन्दिरों मे उन्हे जाने नहीं दिया जाता। धर्म के जो ठेकेदार हैं वे ही उन्हें प्रताड़ित एवं अपमानित करते हैं अब वे जायें तो कहां जायें ?

सामाजिक शोषण उनके साथ इस कारण होता है कि उनका जन्म ऐसी जाति में हो गया है जिसे नीचा कहा जाता है। इसी कारण वे अस्पृश्य हो गये। दलितो को आज भी अस्पृश्यता एवं जाति भेद के कारण स्थान-स्थान पर अपमान की पीड़ा सहन करनी पड़ती है। यह पीडा उन लोगों के लिये तो बिल्कुल असहनीय हो गई है जिन्होने शिक्षा प्राप्त करली है। प्रजातन्त्र कानून व मानवीय हकों में कुछ समझने लगे हैं।

आज भी दलितों के साथ गावों में छुआछूत का व्यवहार मौजूद है। गाव मे सम्पन्न लोग आज भी उन्हें नीचा, निकृष्ट कह कर अपमानित करते है। उन्हें सार्वजनिक तालाबो से पानी भरने से रोका जाता है। मन्दिरो मे प्रवेश पर अब भी अनेक जगह उनके लिये प्रतिबन्ध है और गावो मे दलितो के दूल्हे घोड़े पर नही चढ़ सकते। दलितो को अपने नागरिक अधिकारों के लिये आज जूझना पड़ रहा है।

भारत के लोग दुनियां से रंगभेद, जातिभेद एवं विसमता मिटाने की दुहाई देते है परन्तु यह कितने शर्म की बात है कि हम आजादी के 43 साल बाद भी अस्पृश्यता के कलंक को नही मिटा पाये हैं। आज भी आदमी इस देश में आदमी का मल-मूत्र सिर पर उठाकर डालता है।

दलितों का सर्वाधिक शोषण आर्थिक दृष्टि से हो रहा है। वे कठोर मेहनत करके दूसरों के खेतों में अनाज पैदा करते हैं परन्तु उन्हे उनकी मेहनत का पूरा प्रतिफल नही मिलता। आज देश की सारी अर्थ व्यवस्था, कृषि, उद्योग एवं निर्माण का कार्य, दलित मजदूर करते हैं परन्तु वे ही गरीबी के शिकार हैं। जब तक सम्पत्ति का अनियन्त्रित व्यक्तिगत अधिकार रहेगा शोषण की व्यवस्था का अन्त सम्भव नहीं है।

राजनैतिक रूप से भी आजादी के बाद दलितों का शोषण ही हुआ है। देश भले ही आजाद हो गया हो पर सत्ता पर पकड आज भी उन्ही लोगों की है जो आजादी के पूर्व भी सत्ता में थे। पहले जो सामन्त थे कुलीन व साहूकार थे पुरोहित थे आज वही सरपच, विधायक मन्त्री बनकर, शासन कर रहे है क्योंकि आपके स्रोत उन्ही के कब्जे में है। चुनाव के समय हर पार्टी दलित कल्याण का नारा लगाती है व दलितों के वोट बटोर कर सत्ता मे आ जाती है। परन्तु दलितों के हित की किसी को कोई परवाह नही है। दलित वर्ग के लोग जब तक स्वय संगठित होकर, राजनैतिक दल अथवा संयुक्त दलित मोर्चा नही बना लेते तब तक उनकी राजनैतिक उपेक्षा होती ही रहेगी। आवश्यकता सर्वाधिक इसी बात की है कि राजनैतिक चेतना का दलितों में विकास हो। यदि वे सगठित हो और उनका एक राजनैतिक मंच हो तो ही राजनैतिक सत्ता को ग्रहण कर सकते है। दलितों की सारी समस्याओं का समाधान मात्र राजनैतिक सत्ता को हथिया कर ही हो सकता है।

इस तरह से हम देखते हैं कि दलित समाज की प्रमुख समस्या, अशिक्षा, गरीबी और शोषण ही है।

दलितों को अपनी इन समस्याओं का समाधान मिल कर करना चाहिये। इन समस्याओं से जन-जन मे पीडा और आक्रोश को उभारना चाहिये। जन-जन की चेतना जब वर्ग चेतना का रूप ले लेगी और जब वर्ग चेतना का विस्फोट होगा तो क्रान्ति के लिये भूमि तैयार होगी।

दलित जन-जन की पीडा जैसे-जैसे घनीभूत होगी वैसे-वैसे वह एक हृदय से निकल कर दूसरे में पहुंचेगी। जैसे-जैसे उनकी पीड़ाओं, संवेदनाओं और जिम्मेदारियो का सामूहीकरण होगा। वैसे-वैसे वर्ग चेतना का विकास होगा और वर्ग-चेतना से जन्म लेने वाली विराट शक्ति देश की मौजूदा व्यवस्थाओं में परिवर्तन को अवश्य भावी बना देगी।

अपने सपनों को साकार बनाने के लिए अपने अन्दर आक्रोश को जगाइये। शोषण, अपमान और अन्याय से उठने वाली पीड़ा को महसूस करिये। जब कोई व्यक्ति यह महसूस करने लग जाता है कि वह गुलाम है तो उसकी आत्मा स्वतन्त्रता के लिये गुलामी की बेड़ियों को तोड़ने के लिए, छटपटाती है। तथा उसकी आत्मा

उसे बन्धन मुक्त होने की शक्ति व प्रेरणा देती है। इस शक्ति के बल पर वह एक दिन गुलामी से मुक्त हो जाता है।

गुलामी और अपमान की जिन्दगी से तो स्वाधीनता और सम्मान के लिये संघर्ष करके मर-मिटना ज्यादा गरिमा की बात है। क्योंकि आजादी के लिये मरने वालों की शहादत, उनके गुलाम साथियों को जबरदस्त प्रेरणा व शक्ति स्वाधीन होने की देती है। आप अपनी और अपने अन्य साथियों की अपमानित जीवन की व्यथा को जगायें यही सामूहिक पीड़ा आपको उठने एवं शक्ति पूर्ण होने के लिए वरदान सिद्ध होगी। आक्रोश की चिनगारी, जब जन-जन मे भड़केगी तभी महान जन-क्रान्ति के लिये, वर्ग चेतना और वर्ग संघर्ष की भावना का विकास होगा।

समाधान त्रयी-वर्ग संघर्ष

वर्ग संघर्ष दलित क्रान्ति दर्शन का दूसरा सूत्र है। इस सूत्र के तीन उप सूत्र (1) शिक्षा (2) संगठन और (3) संघर्ष है। इन सूत्रों का समुच्चय वर्ग संघर्ष सूत्र के नाम से जाना जायेगा। यह सूत्र दलित क्रान्ति को सफल बनाने का साधन बनेगा। संघर्ष के द्वारा दलित वर्ग समता मूलक प्रजातंत्रीय समाजवादी व्यवस्था का अर्जन करेगा।

इस सूत्र के जन्मदाता दलितों के मसीहा बाबा साहेब डा. अम्बेडकर थे। उन्होंने अपने जीवन भर दलित जागरण, दलित क्रान्ति एवं दलित सुधार के लिये अथक प्रयास किये और अन्त मे दलित कल्याण के लिए त्रिसूत्रीय संदेश दिया— (1) शिक्षित बनो (2) संगठित बनो और (3) संघर्ष करो।

डा. अम्बेडकर ने दलितों को आत्म विकास के पथ पर चलने का सन्देश देते हुये कहा कि—

"तुम्हें अपनी दासता स्वयं मिटानी चाहिये। उसकी समाप्ति के लिये तुम ईश्वर या अतिमानव पर आश्रित मत रहो। तुम्हारी मुक्ति राजनीतिक शक्ति में निहित है। न कि तीर्थ यात्राओं तथा उपवासों में। शास्त्रों के प्रति भक्ति भावना तुम्हें दासता, अभाव तथा निर्धनता से नहीं बचा पायेगी। तुम्हारे पूर्वज पीढ़ियों से इस काम को कर रहे हैं। लेकिन कोई आराम नहीं मिला और तुम्हारे दयनीय जीवन मे किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं आया। अपने पूर्वजों के समान तुम चिथड़े पहनते हो। उनके समान तुम भी रोटी के फैंके हुए टुकड़ों पर जीते हो, उन्हीं के समान तुम अनेक रोगों के शिकार बन जाते हो। गन्दे स्थानों में मृत्यु को प्राप्त हो जाते हो। तुम्हारे धार्मिक उपवासों, तपस्याओं और प्रायश्चितों ने तुम्हें भुखमरी से नहीं बचाया।

अभावों, कष्टों तथा निरादरों से तुम्हें पीड़ित किया गया है इसलिये नहीं कि इसका कारण पूर्व निर्धारित है, कि तुमने अपने पूर्व जन्मों में पाप किये हों बल्कि इसलिये कि जो तुमसे ऊपर है उनकी निरंकुशता तथा चालाकी से तुम दबे पड़े हो। तुम्हारे पास कोई भूमि नहीं है, क्योंकि दूसरों ने तुमसे उसे हड़प लिया है, तुम्हारे पास कोई सरकारी नौकरी नहीं है क्योंकि दूसरों ने उन पर एकाधिकार कर लिया है। पूर्व निर्धारित भाग्य में विश्वास मत करो। अपनी शक्ति में विश्वास करो।'

उन्होंने एक अन्य स्थान पर कहा—

"तुम्हारे गलों में लटकी हुई तुलसी की मालायें सूदखोरों के चंगुल से तुम्हें मुक्त नहीं कर पायेगी। चूंकि तुम राम के गीत गाते हो तुम्हें मकान मालिक किराये में छूट नहीं देगा। चूंकि तुम हर वर्ष पंढरपुर की यात्रा करते हो, तुम्हें महीने के अन्त में कोई वेतन नहीं मिलेगा। चूंकि समाज का अधिसंख्यक भाग इन निर्थक रहस्यवाद, अन्ध विश्वासों तथा जीवन के रहस्यों में व्यस्त रहता है। चालाक एवं स्वार्थी लोगों को समाज विरोधी क्रियाओं को संचालित करने के लिये व्यापक क्षेत्र एवं अवसर मिल जाता है।

दलित समाज की समस्याओं के समाधान के लिये डा. अम्बेडकर द्वारा सुझाए गए मार्ग-दर्शन की व्याख्या करते हुए डा. डी. आर. जाटव ने अपनी पुस्तक डा. अम्बेडकर के आलोचक में लिखा है कि—

"अछूतों की समस्याओं के समाधान हेतु यद्यपि डा. अम्बेडकर ने राजनीतिक दृष्टिकोण का प्रयोग किया और यह घोषित किया कि वे राजनीतिक शक्ति को अपने हाथों में लिये बिना वर्तमान सामाजिक ढांचे को नहीं बदल सकते, लेकिन वे ऐसा तभी करने में सफल हो सकते हैं जब वे अपने आपको एक आध्यात्मिक भ्रातृत्व में संगठित कर लें।"

उन्होंने आगे लिखा है कि—

"जहां तक अछूतों की समस्या के राजनीतिक दृष्टिकोण का सम्बन्ध है। डा. अम्बेडकर ने उन्हें बहुत पहले ही प्रोत्साहित किया कि सभी दलित वर्गीय लोग एक राजनीतिक संगठन में एकत्रित हो जायें ताकि अपनी राजनीतिक शक्ति के आधार पर वे सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक मामलों में अच्छा समझौता कर सकें। शर्त यह है कि उन्हें अपना स्वतन्त्र मंच बनाना चाहिये।"

अन्त में उन्होंने बाबा साहब के मार्ग दर्शन को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि—

"इस शताब्दी के मसीहाओं में से बोधिसत्व डा.अम्बेडकर एक थे। जिनका हृदय जाति व्यवस्था में मानवीय शोषण तथा उत्पीड़न को देख कर द्रवित और पीड़ित हो उठा। उन्होंने मानवता के सारे इतिहास को सामाजिक व धार्मिक संदर्भों में समझा और उसकी व्याख्या की तथा मानव प्राणियों के समग्र उत्थान हेतु मार्ग बताया। उनका मार्ग मनस्थिति, अन्तकरण, चेतना का जागरण और परिस्थिति रूपान्तरण है। ऊपरी अभिव्यक्तियों को बदलना ही पर्याप्त नहीं है। मन के धरातल में जो गुत्थियां है, भेदभाव तथा विषमतायें है जो समाज की शत्रु हैं उनका विनाश अनिवार्य है।"

अतः सर्वप्रथम सम्पूर्ण व्यक्ति का रूपान्तरण बोधिसत्व अम्बेडकर के मिशन ज्ञान का लक्ष्य है क्योंकि व्यक्ति ही बुनियादी इकाई है। समस्य सामाजिक संस्थायें व्यक्ति के आचरण की अभिव्यक्तियां हैं। व्यक्तियों के प्रबुद्ध होने से सामाजिक परिवर्तन ठोस एवं मौलिक होगा।

जिस तरह सभी व्यक्तियों की समस्यायें भिन्न 2 होती हैं उसी तरह समस्याओं के समाधान भी अलग-अलग होते है यह तो देश, काल और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। तथा बहुत कुछ व्यक्तियों पर भी निर्भर करता है यदि व्यक्ति विवेकवान है तो समस्याओं को भी जान लेगा और समाधान भी अपने ढंग से ढूंढ लेगा। परन्तु जहां तक दलित वर्ग की समस्याओं के समाधान का प्रश्न है इस सम्बन्ध में डा. अम्बेडकर द्वारा सुझाये गये तीन समाधान ही श्रेष्ठतम हैं। उन्होने शिक्षा, संगठन और संघर्ष द्वारा ही दलितों की समस्याओं के समाधान का मार्ग बताया इन तीनों उप सूत्रों की व्याख्या निम्नानुसार है:—

शिक्षा—शिक्षा ही वह मूल मन्त्र है जिससे व्यक्ति का सर्वांगिक विकास सम्भव है। शिक्षा की ज्योति मनुष्य की सोई हुई आत्मा को जगाती है, उसमें जीवन के सम्बन्ध में विवेक संगत निर्णय की क्षमता पैदा करती है तथा उसके अन्दर प्रेम, सद्भाव, पुरुषार्थ और सेवा के गुणों का विकास कर, उसके जीवन को महिमा शाली बनाती है।

जिस तरह अन्धेरे घर की अव्यवस्था को अन्धेरे में-ठीक नहीं किया जा सकता है। परन्तु प्रकाश दीप जलते ही सब कुछ व्यवस्थित हो जाता है। उसी तरह शिक्षा के द्वारा मनुष्य का सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास की रोशनी ग्रहण कर लेता है। मनुष्य की सारी समस्याओं का समाधान शिक्षा है।

शिक्षित व्यक्ति की आत्मा गौरवपूर्ण हो जाती है, फिर उसे किसी भी तरह अनाचार, के शोषण और अन्धविश्वास का शिकार नही बनाया जा सकता है। शिक्षित व्यक्ति अपने जीवन के लिये मार्ग दर्शन अपनी विवेक बुद्धि से लेता है। अपनी समस्याओं को खोजता है तथा उनका निराकरण करता है। वह निरन्तर स्वावलम्बी बनकर अपना विकास करता है, समाज में अपने लिये स्थान बनाता है तथा देश व समाज की सेवा करता है।

दलित वर्ग की सारी समस्याओं का समाधान शिक्षा द्वारा ही सम्भव है अतः उन्हें अपने बच्चों को हर हाल में उच्च से उच्च शिक्षा दिलाने का संकल्प लेना चाहिये। बाबा साहेब डा. अम्बेडकर का जीवन समूचे दलित वर्ग व पिछड़े वर्ग के लिये एक आदर्श है जिन्होने कि उच्चतर शिक्षा के शिखरों को छूकर सिद्ध कर दिया कि कही भी जन्म लेने मात्र से कोई व्यक्ति निम्न या उच्च नही हो जाता। व्यक्ति शिक्षा, संकल्प और पुरुषार्थ से ही आगे बढ़ता है। यह शिक्षा का ही चमत्कार है कि आज दलित समाज में अनेक बुद्धिजीवी, अधिकारी, राजनेता और समाज सेवक देश के निर्माण में संलग्न हैं। शिक्षा ने ही भारत रत्न डा. अम्बेडकर, बाबू जगजीवनराम और रामविलास पासवान जैसे दलित रत्नों को देश की ऊँची से ऊँची स्थिति तक पहुंचाया है।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि शिक्षा का तात्पर्य मात्र स्कूल और कालेजी शिक्षा से ही नही है अपितु इसका क्षेत्र और भी व्यापक है। जनजन मे स्वतन्त्रता, समानता, बन्धुत्व के आदर्श को जगाना, राष्ट्रीयता, मानवतावाद एवं समाजवाद के जीवन मूल्यों को जन-जन तक पहुंचाना, भी अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि यह जन शिक्षण का आवश्यक अंग है।

दलित समाज के हर मोहल्ले, कस्बे व गावों मे वाचनालय, पुस्तकालय और समाचार पत्र उपलब्ध होने चाहिए। उनमें जनवादी क्रान्ति के विचारों को प्रेषित करने की एक समयबद्ध योजना होनी चाहिये। सभाओं, सम्मेलनों और विचार गोष्ठियों द्वारा सुधारवाद, वर्ग चेतना और राजनैतिक चेतना को प्रेषित करना चाहिये। जन-जन को जन क्रान्ति के लिये प्रशिक्षित करना आज दलित क्रान्ति के लिए परम आवश्यक हो गया है। उसके बिना हमारी विशाल जनशक्ति संगठित नहीं हो सकती है।

भारतीय दलित साहित्य अकादमी इस ओर विशेष प्रयास कर सकती है। साहित्य अकादमी का जाल प्रदेश व जिला स्तर पर फैलाया जाना चाहिये, जिससे कि दलित साहित्यकार पैदा हों और वे समाज को जगाने के लिये लिखें। कवि और कलमकार चाहें तो दलित शक्ति को झकझोर कर जगा सकते है। वे क्रान्ति

का बिगुल बजाने को खड़े हो जायें तो विशाल दलित जन-समूह तुरन्त संगठित होकर क्रान्ति को साकार रूप दे सकता है।

हमें जनता में ऐसी शिक्षा क्रान्ति लानी होगी ताकि मिथ्या धारणाओं, अन्धविश्वासों एवं भाग्यवाद की बेड़ियों को दलित वर्ग के लोग उतार फेंके तथा आत्महीनता से ऊपर उठें। हमें प्रचार और प्रसार का एक महान् अभियान चलाना होगा। क्रान्ति-दर्शन को जन-जन तक पहुंचाना होगा ताकि हमारी युवा शक्ति भ्रजनात्मक कार्यों में लग सके।

इसके साथ ही हमें तकनीकी और रोजगार मूलक शिक्षा एवं प्रशिक्षणों की समुचित व्यवस्था करनी होगी ताकि हमारी आने वाली पीढ़ियां आर्थिक रूप से आत्म निर्भर बन सकें।

हमें अपने लोगों को आत्मावान बनाने के लिये उनमें आत्म-विश्वास, आत्म-शक्ति व पुरुषार्थ जगाने के लिये शारीरिक शिक्षण और आध्यात्मिक शिक्षण की भी व्यवस्था करनी होगी ताकि हमारे दलित साथी शारीरिक दृष्टि से पुष्ट एवं मानसिक दृष्टि से निर्भीक बन सकें।

हमें नैतिकता, सदाचार और मानवता का पाठ अपने बच्चों को पढ़ाना होगा। ताकि वे ज्यादा सक्षम और उत्तरदायी बन कर, देश और समाज के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकें।

हमें इस तरह का शिक्षण व जागरण भी पैदा करना होगा जिससे कि हम अपने शोषण की व्यथा को बढ़ाने वाली रीतियों-नीतियों को छोड़ सकें। मृत्यु भोज, दहेज, फिजूल खर्ची, नशाखोरी जैसी अनेक कुरीतियां दलितों की दरिद्रता को ही बढ़ाती है। धार्मिक अन्धविश्वास, रूढ़ियां और अन्धी परम्परायें दलितों को पुरुषार्थ से हीन बनाकर गुलामी की ओर ही ले जाती हैं। इन सारी कुरीतियों को दूर करने का बीड़ा दलित युवकों को उठाना होगा। इसके साथ ही परिवार नियोजन, अल्प बचत व स्वरोजगार तथा सहकारी उद्योग धन्धे को अपना कर ही हम आर्थिक रूप से आत्म निर्भर बन सकेंगे।

शिक्षा के प्रचार के लिये हर घर से हर बच्चे को स्कूल भेजने का अभियान चलाया जाना चाहिये। प्रतिभाशाली छात्रों को शिक्षा के उच्च अवसर सुलभ कराने का हम सभी को प्रयास करना चाहिये तथा प्रौढ़ शिक्षा के माध्यम से अनपढ़ साथियों को पढ़ाने का संकल्प हमारे शिक्षित साथियों को लेना चाहिये। यदि एक शिक्षित, एक अनपढ़ को भी पढ़ाने का संकल्प ले, तो अशिक्षा को मिटाया जा सकता है।

दलित जातिया एव पिछड़ी जातियां एक दूसरे से बुरी तरह से कटी

हुई हैं यहां तक कि इन लोगों में भी आपस में छूआछूत जैसी घृणित व्यवस्था जारी है जब तक हम आपसी छूआछूत को आपसी भेदभाव को व आपसी फूट को नहीं मिटायेंगे तब तक हम एक शक्तिशाली दलित मोर्चे का गठन कैसे कर पायेंगे ? और कैसे कर पायेंगे सामना सदियों से चले आ रहे अनाचार का ?

संगठन : दलित वर्ग अनेक जातियों में बिखरा हुआ है उन्हें संगठित करने के लिये वर्ग चेतना को जगाना होगा । तभी पूरा वर्ग संगठित होगा । आज यदि व्यवस्था में कोई क्रान्तिकारी परिवर्तन लाना है तो सम्पूर्ण दलित जातियों को एक मंच पर आकर एक संगठित दलित मोर्चा अखिल भारतीय स्तर का बनाना होगा । इसके साथ ही पिछड़ा वर्ग, मजदूर वर्ग, अल्प संख्यक वर्ग और महिला वर्ग के साथ मिलकर संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चे का गठन करना होगा ।

संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चे के गठन का व्यवस्थित विचार मैंने अपनी पुस्तक 'विवेक क्रान्ति दर्शन' में प्रस्तुत किया है जो निम्न प्रकार है—

संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चा : संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चा का गठन भारतीय सर्वहारा व्यक्तियों, जातियों एवं वर्गों द्वारा किया जायेगा । भारतीय सर्वहारा के पांच प्रमुख घटक है—

(1) दलित वर्ग
(2) पिछड़ा वर्ग
(3) मजदूर वर्ग
(4) अल्पसंख्यक वर्ग
(5) महिला वर्ग

ये सभी वर्ग मिलकर संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चे का गठन करेंगे ।

संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चे का गठन नीचे से जन साधारण द्वारा ऊपर की ओर किया जायेगा । मोर्चे का संगठन पांच स्तरीय होगा ।

मोर्चे का प्रथम स्तरीय संगठन गांवों, मोहल्लों, कस्बों एवं नगरों में जातीय एवं समूह स्तर पर किया जायेगा । संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चा से सम्बन्धित वर्गों के लोग स्थानीय स्तर पर अपनी-अपनी जातियों एवं समूहों के अलग-अलग व्यवस्थित संगठन स्थापित करेंगे । जिनका उद्देश्य मोर्चे के वर्गों का गठन, वर्ग-चेतना का विकास, जन शक्ति का जागरण एवं सामाजिक और आर्थिक सुधार कार्यक्रमों को चलाने का होगा ।

मोर्चे का द्वितीय स्तरीय संगठन तहसील मुख्यालय स्तर पर होगा । जिसमें सभी जाति एव समूह के लोग अपने-अपने वर्ग जैसे—दलित वर्ग, पिछड़ा वर्ग, मजदूर

वर्ग, अल्प संख्यक वर्ग और महिला वर्ग जिससे कि वे सम्बन्धित हैं, संगठन का निर्माण अलग-अलग करेंगे।

इन संगठनों का निर्माण प्रथम स्तर के संगठन द्वारा चुने हुये प्रतिनिधियों द्वारा आपसी सहमति से या आवश्यकता होने पर मतदान से किया जायेगा। ये संगठन वर्ग संगठन कहलायेंगे।

मोर्चे का तृतीय स्तरीय संगठन जिला मुख्यालय के स्तर पर होगा जिसका गठन द्वितीय स्तर पर गठित किये गये प्रतिनिधियों द्वारा किया जायेगा। इस संगठन का गठन भी जहां तक सम्भव होगा सभी वर्ग के प्रतिनिधियों की आम सहमति से या आवश्यकता पड़ने पर मतदान से किया जायेगा।

ये संगठन संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चा की मुख्य इकाई होगा।

मोर्चे का चतुर्थ स्तरीय संगठन प्रदेश मुख्यालय पर होगा जिसका गठन तृतीय स्तर पर जिले में गठित संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चा के निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा किया जायेगा। जिले के प्रतिनिधि ही प्रदेश की आमसभा के सदस्य इनके द्वारा ही प्रदेश स्तर पर कार्यकारिणी का गठन किया जायेगा।

मोर्चे का पंचम स्तरीय अन्तिम संगठन अखिल भारतीय स्तर का होगा। इस संगठन का गठन समस्त प्रदेशों की ईकाईयों के द्वारा भेजे गये जन प्रतिनिधियों द्वारा किया जायेगा। अखिल भारतीय स्तर पर भेजे गये प्रतिनिधि संगठन की आम सभा के सदस्य होंगे। तथा वे ही अखिल भारतीय मोर्चा की कार्यकारिणी का गठन करेंगे।

सभी स्तर के संगठनों की जो कार्यकारी परिषदें गठित की जाय उसमें समन्वित पांचों वर्गों के प्रतिनिधि बराबर-बराबर होंगे। प्रत्येक कार्यकारिणी का नेतृत्व सामूहिक अध्यक्ष मण्डलों द्वारा किया जायेगा।

संगठनों का गठन पाँच वर्ष के लिये किया जायेगा तथा सामूहिक अध्यक्ष मण्डल की अध्यक्षता बारी-बारी से प्रत्येक वर्ग का प्रतिनिधि ही करेगा।

संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चे का एक लिखित संविधान होगा, इसका निर्माण संयुक्त सर्वहारा मुक्ति मोर्चा के गठन के बाद केन्द्रीय साधारण सभा द्वारा बनाई गई विधान प्रारूप समिति द्वारा किया जायेगा। जिसमें विभिन्न मुद्दों पर केन्द्रिय साधारण सभा में विचार विमर्श होगा।

यह मोर्चा भारतीय संविधान, सरकार और आदर्शों में पूर्ण आस्था रखेगा। मोर्चा अपने कार्यक्रम का संचालन विधि विधान के अन्तर्गत अहिंसात्मक ढंग से करेगा। इस मोर्चे में हिंसा, सामाजिक घृणा, वर्गों के विद्वेष, देशद्रोहिता, उग्रवा

एवं हिंसक आन्दोलनों के लिये कोई स्थान नहीं होगा । विध्वंशक प्रवृतियों में सलग्न व्यक्तियों को मोर्चा में शामिल नही किया जायेगा ।

मोर्चा भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त नागरिकों के मूल अधिकारों को भारतीय सर्वहारा जनता को दिलाने के लिये सक्रिय भूमिका का निर्वाह करेगा । नागरिक अधिकारों की बहाली के लिये मोर्चा संघर्ष करेगा । मोर्चा सरकार द्वारा चलाये जा रहे जन कल्याण कर्यक्रमों को आम जनता तक पहुंचाने में अपना योगदान करेगा ।

संघर्ष : दलित क्रान्ति के जनक डा. अम्बेडकर ने कहा था कि—

"हमें राजनीतिक आजादी तो मिल गई है परन्तु अभी तक समाज मे गैर बराबरी, ऊँच-नीच और भेदभाव मौजूद हैं अमीर और गरीब के बीच की दूरियां बढ़ गई हैं । अतः हमें सामाजिक समानता और आर्थिक न्याय के लिये, संसाधनों के उचित वितरण के लिये, लाभ मे गरीबों की भागीदारी के लिए तथा सभी तरह की आर्थिक एवं सामाजिक विषमताएं मिटाने के लिये संघर्ष करना ही होगा ।"

दलित वर्ग के लोग गिडगिडाते रहकर, आत्महीनता का शिकार बने रहकर, भाग्य के भरोसे बैठे रहकर, अपना उद्धार नही कर सकते । उन्हें अपने अधिकारों के लिये संघर्ष करना होगा । कोई भी सरकार गरीबी, शोषण एवं अनाचार को तब तक नही मिटा सकती जब तक कि शोषित एवं गरीब जन-समूह अन्याय का मुकाबला करने को तत्पर न हो जाये ।

गरीबी दिनोदिन बढ़ रही है । बेरोजगारी के कारण पढ़े लिखे युवक अपने भविष्य के प्रति आशंकित है । दलितों पर अत्याचार निरन्तर बढ रहे है । मंहगाई, भ्रष्टाचार और असुरक्षा की भयावह स्थितियो ने जन असन्तोष को बढ़ाया ही है । जैसे-जैसे दलितों मे और गरीबो मे अधिकार बोध बढ़ रहा है वैसे-वैसे शोषक सम्पन्न वर्ग के अत्याचार की मात्रा भी बढ़ रही है । इस तरह स्थितियां धीरे-धीरे विस्फोटक होती जा रही है । ये परिस्थितियां ही दलित और गरीबों को संगठित होकर समता मूलक समाज की रचना के लिये संघर्ष करने को उत्प्रेरित कर रही हैं । परन्तु हमें संघर्ष के जोश में अपने होश को नहीं खोना है हमें अपनी विशाल जन शक्ति को रचनात्मक अहिंसात्मक एवं वैधानिक आन्दोलन के लिये और जनमत के जागरण लिये प्रशिक्षित करना है ताकि हम अपने आदर्शो के मार्ग से भटक नहीं सकें ।

भारत के गरीब, पिछड़े हुये दलित मजदूर और किसान जब स्वयं जागृत होकर अपने उत्तरदायित्वों का बोध करके, राष्ट्रीय चेतना और वर्ग चेतना से भर-

पूर होकर उठ खड़े होंगे तो वे समाज के नव निर्माण के लिये रचनात्मक कार्य करेंगे। अधिक परिश्रम करके अपनी व देश की अर्थ व्यवस्था को मजबूत करेंगे। सामाजिक भेदभाव, ऊँच-नीच एवं अस्पृश्यता का अन्त करेंगे। इस तरह धीरे-धीरे संगठित होकर वे राजनीतिक शक्ति को भी हासिल करेंगे। वर्ग चेतना का अभिप्राय सामुहिक उत्तरदायित्व के पालन से है न कि विध्वंशक आन्दोलन से।

जब तक इस देश के दलित एवं दरिद्र व्यक्ति अपने साथ होने वाले दुर्व्यवहार के प्रति अपने अन्दर आक्रोश पैदा नही करेंगे, अपने जीवन को गरिमामय बनाने के लिये संघर्ष नहीं करेंगे, तब तक उनका कल्याण नही हो सकता है।

यह कितने खेद की बात है कि दलितों के भरे पूरे मोहल्लों मे थोड़े से अपराधिक तत्व सरेआम अपराध करते हैं लोगों को डराते, धमकाते है, मारपीट करते हैं, बहू-बेटियों की बेइज्जती करते हैं तथा जन-समूह खड़ा-खड़ा यह सब देखता रहता है या अधिकांशतः भाग छूटता है और यही अगली बार भाग छूटने वालों के साथ होता है।

क्या यह शर्म की बात नही है ? कब तक इसी तरह गुलामी, कायरता और नामर्दी की जिन्दगी जीते रहोगे। क्या इस तरह डरते-डरते तुम्हारी सुरक्षा हो गई। यदि नही तो सोच लो अपनी मान-मर्यादा के लिये, शरीर व सम्पत्ति की रक्षा के लिये और सुख सुविधा से जीने के लिये एकजुट होकर संघर्ष करोगे तभी आपकी गरिमा की रक्षा हो सकेगी।

मुझे यह कहते हुये बड़ी पीड़ा होती है कि पत्नि पिटती रहती है और पति हाथ जोडे दया की भीख मांगता है। पुत्र पिटता है और उसका पिता भक्षक से रक्षा की भीख माँगता है। भाई के साथ अन्याय होता है और उसका भाई शोक मे डूबा खड़ा रहता है। क्या इस तरह के लोग मनुष्य भी कहलाने के अधिकारी है, कदापि नही।

अरे जानवर व कीडे-मकोडे को भी सताओ तो वह भी प्रतिरोध करता है। क्या आप लोगो की जिन्दगी कीडे-मकोडों से गई बीती है ?

उतार फैंकों कायरता और नपुंसकता के कलंक को, अन्याय का विरोध करना सीखो। आपकी, आपके परिवार व सम्पत्ति की रक्षा आपको ही करनी है। और कोई नही करेगा।

यदि आप अपने साथी की मदद को दौड़ोगे तो वह भी आपकी मदद करेगा इसलिये एक दूसरे की मदद जान पर खेलते हुये भी करो। न्याय के लिये मर जाना ठीक है बजाय सिर झुकाकर अन्याय की जिन्दगी जीने से, अन्याय की सौ वर्ष की जिन्दगी से न्याय व गरिमा का एक क्षण महत्वपूर्ण है।

यह कितने खेद की बात है कि दलित वर्ग के जो लोग अपने शोषण का अन्त करना चाहते हैं, समाज में अपने लिये सम्मानित स्थान चाहते हैं वे भी अपने से निम्न स्तर की जाति के साथी को घृणा की नजर से देखते हैं। जो अपने साथ छूआछूत का बर्ताव सहन नहीं करते, वे भी अपने से नीची जाति के व्यक्ति के साथ छूआछूत का घृणित व्यवहार करते हैं।

जो स्वयं गरीब और पिछड़े हुये हैं और दरिद्रता में जी रहे हैं, वे भी अपने आत्म सन्तोष के लिये, अपने दूसरे साथियों से ऊँचा होने का दम्भ रखते हैं और उनका छूआ पानी तक नहीं पीते हैं। तथा उन्हें अपना संगी साथी मानने को भी तैयार नहीं है।

नहीं। इस तरह हमारा कल्याण कभी नहीं हो सकता है। हमें दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिये जैसा कि हम दूसरों के द्वारा, अपने प्रति किया जाना पसन्द करते हैं।

यदि आप चाहते है कि आपके साथ कोई घृणा का, भेदभाव और अस्पृश्यता का व्यवहार नहीं करे तो आपका यह कर्त्तव्य भी हो जाता है कि आप भी दूसरों के साथ वैसा व्यवहार न करें। यदि आप चाहते है कि समाज मे आपका सम्मान हो, आपके शरीर और सम्पत्ति की रक्षा हो तो आपका यह कर्त्तव्य भी है कि आप दूसरों का सम्मान करें तथा दूसरे के शरीर एवं सम्पत्ति की रक्षा मे सहयोगी बने। यदि आप अपने अधिकारों की रक्षा चाहते है तो आपका कर्त्तव्य भी है कि दूसरो के अधिकारों की रक्षा में आपका सहयोग हो।

हर दलित व्यक्ति को यह संकल्प लेना होगा कि वह अपनी आत्महीनता को मिटाकर, सभी के साथ अच्छा व्यवहार करे अपने सम्मान व गरिमा की हर कीमत पर रक्षा करे। अपने कार्य व व्यवहार की गुणवता को बढाये। अपने रहन-सहन एवं खान-पान के स्तर में सुधार करे। सभी के साथ मानवीय एवं शिष्ट व्यवहार करे। समाज के प्रति अपनी सद्भावना और सेवा को विकसित करे तथा समाज मे अपना आदरणीय स्थान अपने अच्छे कार्य व व्यवहार से बनाये।

दलित क्रॉंति की सफलता के प्रति मैं पूरी तरह आश्वस्त हूं। परन्तु मुझे हमेशा यही आशङ्का बनी रहती है कि यह महान आन्दोलन बदले की भावना पर आधारित होकर, उग्र हिंसा का रूप धारण न कर ले, यदि ऐसा हुआ तो यह स्थिति हमारे देश व समाज के लिये बड़ी घातक होगी।

———

अध्याय नौ

उद्देश्य त्रयी - लोकशक्ति जागरण

लोकशक्ति जागरण "दलित क्रान्ति दर्शन" का तीसरा सूत्र है। इस सूत्र के तीन उप सूत्र हैं :—

(1) प्रजातन्त्र
(2) राष्ट्रीयता
(3) समाजवाद

इन तीनों उपसूत्रों का समुच्चय लोकशक्ति जागरण के नाम से जाना जायेगा। यह सूत्र दलित जन समूह में लोकशक्ति का जागरण करेगा। लोकशक्ति के जागरण से ही दलितों को समता मूलक समाज की स्थापना की राह दिखाई देगी।

हमारा प्रमुख लक्ष्य भारत में एक ऐसे समतामूलक, धर्मनिरपेक्ष, प्रजातंत्रीय समाज की रचना करने का है जिसमें कि प्रत्येक भारतीय को बिना जाति, धर्म, लिंग और क्षेत्रीयता का भेद किये विकास के समान अवसर मिले। यह समाज जाति विहीन, वर्ग विहीन एवं साम्प्रदायिक कटुता विहीन, कौमी एकता से भरपूर समाज होगा। सभी तरह की आर्थिक व सामाजिक विषमताओं का अन्त कर सभी के लिये न्याय दिलाने की व्यवस्था समाज मे हो, इसके लिये दलित समाज सतत प्रयास करेगा। प्रजातन्त्रीय समाजवादी समाज के अन्तिम लक्ष्य तक पहुंचने के लिये दलित मोर्चा अपने मोर्चा अपने आदर्शों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए रचनात्मक प्रयास करेगा।

हमारी भारतीय संविधान मे पूरी आस्था होगी। हमारा उद्देश्य भारतीय संविधान की प्रस्तावना को भारतीय समाज में साकार रूप देना है। इस सन्दभ में भारतीय संविधान की प्रस्तावना को जान लेना अत्यन्त आवश्यक है।

हम भारत के लोग,
भारत को एक सम्पूर्ण, प्रभुत्व सम्पन्न,
समाजवादी, लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने,
के लिये तथा
उसके समस्त नागरिकों को,
सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक न्याय,
विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और
उपासना की स्वतन्त्रता,
प्रतिष्ठा और अवसर की समता,
प्राप्त करने के लिये तथा उनमें सब मे,
व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता,
और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली
बन्धुता बढाने के लिये,
दृढ़ संकल्प होकर अपनी-अपनी इस संविधान सभा में आज ता. 26 नव. 1949 मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी सवत 2006 विक्रमीको एतद्‌द्वारा इस सविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

इस पुनीत अवसर पर जब कि हम भारत की नव निर्माण योजना पर श्रम सक्रियता से विचार कर रहे हैं तो डा. अम्बेडकर के निम्नांकित उद्धरण पर गहराई से विचार करना होगा। उसे साकार रूप देने का प्रयास करना होगा।

"सरकार का जनतांत्रिक रूप समाज के जनतान्त्रिक रूप की अपेक्षा रखता है। यदि कोई सामाजिक जनतन्त्र नहीं है तो जनतन्त्र के आकार गत रूप का कोई महत्व नही है। वस्तुतः वह अनुपयुक्त ही होगा। राजनीतिज्ञो ने कभी यह महसूस नही किया। जनतन्त्र केवल सरकार का ही रूप नही है वह मूलतः समाज का ही एक रूप है। किसी भी जनतान्त्रिक समाज के लिये यह आवश्यक नही है कि उसमें एकता लक्ष्य की सामुदायिकता, लोक उद्देश्यो के प्रति वफादारी और सद्‌भावना की पारस्परिकता हो, किन्तु निर्विवाद रूप से उसमे दो बातें अन्तर्निहित है। प्रथम अपने साथियो के प्रति सम्मान तथा समता की मन:स्थिति एक मनोभावना, द्वितीय सामाजिक बाधाओ से मुक्त एक समाज संगठन।"

इस अवसर पर आधुनिक भारत के निर्माता भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री जवाहरलाल नेहरू के स्वाधीनता के अवसर पर दिये गये उनके भाषण के निम्नांकित अंश को भी ध्यान मे रखना होगा।

"आधी रात के घन्टे के साथ जब संसार सो रहा है, भारत जीवन और स्वाधीनता की ओर जागेगा। एक क्षण आता है जो इतिहास में कभी ही आता है, जब हम पुराने से नये की ओर बढ़ते हैं। जब एक युग समाप्त होता है और जब बहुत दिनों तक दबाई हुई राष्ट्र की आत्मा बोल उठती है। यह उचित ही है कि इस पवित्र अवसर पर हम भारत व उसके निवासियों की ओर उससे भी बड़ी मानवता की सेवा का संकल्प लें। भारत की सेवा का अर्थ होता है उन लाखों लोगों की सेवा। जो कि कष्ट सह रहे है इसके अर्थ होते हैं गरीबी, अज्ञान, रोग और अवसर की असमानता को समाप्त करना।"

1–प्रजातन्त्र—

हमारा प्रथम आदर्श एवं उद्देश्य प्रजातन्त्र है। प्रजातन्त्र केवल शासन की पद्धति ही नहीं है, बल्कि जीवन की शैली है। प्रजातन्त्र की भावना हमारे प्रत्येक कार्य और व्यवहार में होनी चाहिये। प्रजातन्त्र जनता का, जनता के लिये, जनता द्वारा शासन है। जो नागरिक स्वयं अनुशासित होंगे वे ही शासन में अपनी भूमिका अच्छी तरह निभा सकेंगे। प्रजातन्त्र के आधार है—स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व।

जवाहरलाल नेहरु ने प्रजातन्त्र की व्याख्या निम्नांकित शब्दों में की है,

"मेरे लिए गणतन्त्र का अर्थ प्रमुख प्रकार की सरकार तथा किसी समकानून संस्था से कुछ अधिक है। यह आवश्यक रूप से जीवन की नैतिक मानदण्डों तथा मान्यताओं की योजना है। आप गणतांत्रिक हैं या नही यह इस बात पर निर्भर करता है कि आप एक व्यक्ति अथवा वर्ग के रूप में किस प्रकार का आचरण तथा चिन्तन करते है। गणतन्त्र के लिये अनुशासन, सहिष्णुता, पारस्परिक सद्भावना का होना अत्यन्त आवश्यक है। अपनी स्वतन्त्रता के लिये दूसरों की स्वतन्त्रता के प्रति आदर का भाव होना आवश्यक है। गणतन्त्र में परिवर्तन पारस्परिक विचार विमर्श तथा समझाने बुझाने से किया जाता है, हिंसक उपायों से नही। गणतन्त्र का अर्थ यदि कुछ है तो समानता, केवल मत देने के अधिकार का ही नहीं बल्कि आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में भी समानता। पुनश्च:

"मैं किसी भी मत मतान्तर अथवा धर्म से जकड़ा हुआ नहीं हूं, किन्तु मानव की नैसर्गिक आध्यात्मिकता में विश्वास अवश्य रखता हूँ। इसको कोई चाहे धर्म कहे या न कहे। मैं व्यक्ति मात्र की सहज गरिमा में विश्वास करता हूं। मेरा यह विश्वास है कि प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर दिया जाना चाहिये। मुझे ऐसा समतावादी समाज मे पूरा विश्वास है जिसमें अधिक भिन्नताएँ न हों। मुझे धनी व्यक्तियो की बेहूदगी तथा निर्धनों की दरिद्रता नहीं भाती।"

डॉ. राधाकृष्णन के शब्दों में नेहरू का विश्वास था कि—

"मानवता के कूड़े करकट के ढेर पर किसी भी व्यक्ति को नहीं फेंक देना चाहिये। उसे महत्वपूर्ण व उद्देश्यपूर्ण माना जाना चाहिये। किसी को भी चाहे वह राज्य हो या कोई संगठन या व्यक्ति, व्यक्ति को दबाने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये। उनका मुख्य सिद्धांत यह था कि राज्य व्यक्ति के लिये है न कि व्यक्ति राज्य के लिये।"

विश्वनाथ प्रसाद वर्मा के शब्दों में—

"भूखे और नंगे व्यक्तियों के लिये कोरा मताधिकार कोई महत्व नहीं रखता यदि समाज में ऊँच-नीच, छुआछूत के भेदभाव हो, दरिद्रों पर कर कठोर हों, धन का न्यायपूर्ण वितरण नहीं हो और वर्गभेद का प्रसार हो तथा मुट्ठी भर शिक्षित लोग निरक्षर जन साधारण को अपने पैरों तले दबातें हो तो देश व समाज में लोकतन्त्र की बात करना कोई मायना नहीं रखती है।

2—राष्ट्रीयता—

हमारा द्वितीय आदर्श एवं उद्देश्य राष्ट्रीयता है।

राष्ट्रीयता की तीव्र भावना ही किसी देश को तेजी से विकास की ओर ले जा सकता है। भारतीय दलित वर्ग को यदि अपने अधिकारों को प्राप्त करना है तो यह परम आवश्यक है कि वह राष्ट्र के प्रति, अपनी जिम्मेदारी के प्रति जागरूक हो। देश की एकता और अखण्डता के लिये मरना मिटना सीखे। क्योंकि इस देश की उन्नति की राह पर यदि कोई ले जा सकता है तो वह भारत की कोटि-कोटि साधारण जनता है। इस देश का कोई नव निर्माण कर सकता है तो वह देश की साधारण व गरीब जनता ही कर सकती है। दलित वर्ग के लोग ही देश की सर्व-साधारण जनता के महत्वपूर्ण अंग हैं, क्योंकि ये ही अधिकांशतः अपने खून पसीने से देश की धरती से अन्न पैदा करते हैं, बस कारखाने चलाते हैं, भवन और सड़कों का निर्माण करते हैं अर्थात् बहुसंख्यक श्रमजीवी दलित वर्ग के ही लोग हैं। जिनके कन्धों पर देश के नव निर्माण का और अपने स्वयं के कल्याण का भार है। राष्ट्रीयता की भावना के आधार पर ही, राष्ट्रीय उत्तरदायित्वों को पूरा करके ही ये समाज में अपना सम्मानजनक स्थान बना सकते हैं। राष्ट्र की धारा से अलग-थलग कट कर, अपने ही देश बन्धुओं के प्रति प्रतिशोध की भावना पैदा कर लिया और उद्देश्य के बल पर न तो उनका हित पूरा हो सकता है और न ही राष्ट्र का।

भरोसा है तो आप पर है, क्योंकि जो स्वार्थ में अन्धे होकर धन संग्रह की दौड़ में लगे हैं उनसे कुछ होने वाला नहीं है। आप यह भी जान लें कि अधिकारों का सृजन कर्त्तव्य के द्वारा ही होता है। जो व्यक्ति जिस सीमा तक उत्तरदायी होता है उसी सीमा तक अधिकारी भी हो सकता है। जो व्यक्ति अपने उत्तरदायित्वों के प्रति सजग नहीं है, देश और समाज के लिए पूरी निष्ठा और संकल्प से कार्य नहीं करता है वह कभी भी अधिकारी नहीं हो सकता है, यदि ऐसा व्यक्ति किसी तरह छल-कपट करके अधिकार हासिल भी कर लेगा तो उत्तरदायित्व के अभाव मे वे अधिकार स्वतः ही उससे छिन जायेंगे। यदि दलित वर्ग के लोगों को अपने अधिकारों को हासिल करना है तो वह ऐसी निष्ठा से देश के प्रति अपनी जिम्मेदारियों का निर्वाह करके ही कर सकेंगे। यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि आज हर वर्ग अपने अधिकारों के लिए जुझारू हो जाता है, परन्तु देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों की परवाह नहीं करता है।

जो व्यक्ति राष्ट्रीय निष्ठा एवं कर्त्तव्य भावना से भरपूर होता है उसी की ऊर्जा जगती है। जब तक आप अपने पेट भरने के लिए, अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिये एवं केवल लोभ पर आधारित होकर कार्य करेंगे। सफलता नहीं मिल सकती देशभक्ति की भावना और राष्ट्र निष्ठा मनुष्य के कार्य को गुणवत्ता की बढ़ा देती है और ऊर्जा का मार्ग प्रशस्त करती है।

यह देशभक्ति की भावना ही थी जिसके कारण अनेक लोग भारत माता के दीवाने हो गये। मातृभूमि को आजाद कराने के लिए वे हँसते-हँसते फांसी के फंदे चूम कर शहीद हो गये। अनेक भारत माता के सपूतों ने देश और देशवासियों के कल्याण के लिये, जेल की यातनाएँ सही लाठियां और गोलियां खाई, परन्तु पीछे नहीं हटे। उनकी प्रेरणा से ही सारा देश जागा, स्वाधीनता संग्राम हुआ और हमने आजादी हासिल की।

अपनी जन्मभूमि का स्थान मां और बाप से भी बढ़कर है। यदि हमारी जन्मभूमि नहीं होती तो हम कहां होते ?

हमने भारत की भूमि पर जन्म लिया है। इसकी रज मे लोट-लोट कर हम बड़े हुए हैं। इसका अन्न और जल ग्रहण कर हमारा शरीर पुष्ट हुआ है। इसकी हवाएँ हमारे प्राणों का आधार हैं। और सही अर्थों मे देखें तो हमारे शरीर का एक एक कण मातृभूमि के उपकार का ऋणि है। यदि इतना सब कुछ जानते और समझते हुए भी हमारे अन्दर राष्ट्रीयता का बोध नहीं होता है, देश के लिये मरने और मिटने का संकल्प नहीं जगता है तो हम भारत मां के सपूत कहलाने के अधिकारी नहीं हैं।

देशभक्ति की व्यापक भावना से हमें इस बात का एहसास भी होना चाहिए कि भारत की भूमि पर जन्म लेने वाला हर व्यक्ति भारत मां का लाल है इस नाते वह हमारा अपना बन्धु है, परिवार का सदस्य है। देश की सामाजिक समरसता, राष्ट्रीयता की भावना के आधार पर ही कायम रह सकती है। देशभक्ति की भावना से ही जाति, सम्प्रदाय, अलगाववाद और क्षेत्रीयता के कलंक से देश को बचाकर हम देश की एकता और अखण्डता की रक्षा करने में समर्थ हो सकते हैं।

हमारे देश ने अपनी जातिगत फूट, अज्ञान और पुरुषार्थ हीन सत्ता के कारण सैकड़ों साल की गुलामी भोगी है। अब तो हमें सभलना ही होगा। देश के सामने मंडराते खतरों का मुकाबला करने के लिए देश भक्ति की भावना से ओत-प्रोत होकर सर्वसाधारण भारतीयों को दलितो को, मजदूरों को, महिलाओं को और अल्प सख्यकों सभी को राष्ट्रीयता और बन्धुता के धागे में बाध कर एक मजबूत भारतीय कौम को हमें जन्म देना होगा।

देश की स्वाधीनता कायम रहेगी तभी हमारा जीवन, हमारे अधिकार और विकास के अवसर रहेंगे। अतः देश की एकता और अखण्डता के लिए हमें हर समय हर कुर्बानी देने के लिए तैयार रहना होगा तभी हम भारत माता के सच्चे सपूत कहलाने के अधिकारी होंगे।

3—समाजवाद—

हमारा तृतीय आदर्श एवं उद्देश्य समाजवाद है। भारतीय समाजवाद कार्लमार्क्स के समाजवाद से बिल्कुल भिन्न है। विवेक दर्शन की यह स्पष्ट मान्यता है कि भारत मे जिस समाजवादी समाज की हम कल्पना करते हैं उसका निर्माण भारतीय समाज की संरचना, भारतीय संस्कृति एवं परम्पराओं, तथा भारतीयों के आदर्शों के अनुरूप ही संभव होगी।

हमारे देश का सर्वहारा वर्ग भी मार्क्स के सर्वहारा वर्ग से बिल्कुल भिन्न है। मार्क्स ने जिस सर्वहारा वर्ग की कल्पना की है वह आर्थिक रूप से शोषित श्रमिकों एवं मजदूरों का ही वर्ग है। जबकि हमारा देश कृषि प्रधान देश है। हमारे देश में औद्योगिक मजदूर उतनी संख्या मे नही हैं, जितनी संख्या में खेतिहर मजदूर, कारीगर एवं सामाजिक तथा आर्थिक वर्ग के पिछड़े हुये लोग हैं। हमारे देश के साधनविहीन लोग अनेक जातियों, धर्मो एवं मान्यताओं मे बंटे हुए हैं। हमारे देश का सामाजिक और आर्थिक ढांचा मार्क्स की कल्पना से भिन्न है। हमारे यहां शोषण की जो व्यवस्था है, उसका कारण आर्थिक होने के साथ-साथ सामाजिक भी है। अतः सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े हुए, किसान और मजदूर, कारीगर दस्तकार, श्रमजीवी और नौकरी पेशा महिलाएँ एवं दलित सभी प्रकार के

लोग सारी कृत्रिम बाधाओं को हटा कर लोकशक्ति के रूप में जागृत होंगे तभी भारतीय समाजवाद की कल्पना साकार रूप ले सकती है।

भारतीय समाजवाद से मेरा अभिप्राय एक ऐसे समता मूलक जातिविहीन एवं वर्ग विहीन रचनात्मक समाज से है, जिसमें कि प्रत्येक भारतीय को बिना जाति, धर्म और क्षेत्रीयता का भेद किये विकास के समान अवसर मिलें। आर्थिक और सामाजिक विषमताओं का अन्त हो, जाति और धर्म की दीवारें टूटें और राष्ट्रीयता और बन्धुत्व के धागे में सुगठित रूप से पूरा देश एकजुट हो। हर हाथ को काम मिले और हर खेत को पानी मिले। जीवन की आवश्यक सुख-सुविधाएँ सभी को उपलब्ध हों। भारत आर्थिक सम्पन्नता, मानवीय गरिमा से उन्नत एक ऐसा महान राष्ट्र बने जिससे कि दुनिया के अन्य देश भी मानवता, प्रजातन्त्र और समाजवाद की सीख लें।

समाजवाद को साकार रूप देने के लिए सम्पत्ति के व्यक्तिगत अधिकार को नियन्त्रित किया जाना जरूरी है। सम्पत्ति का अनियन्त्रित अधिकार ही शोषण की पूँजीवादी व्यवस्था को जन्म देता है। यह सही है कि सम्पत्ति के व्यक्तिगत अधिकार को यदि समाप्त किया जाता है तो पूरा देश चौपट हो जायेगा। क्योंकि अभी हमारे देश में अपने लिये ही काम करने की धारणा है राष्ट्र और समाज के लिये संकल्प से काम करने की भावना अभी तक हमारे देश मे पैदा नही हुई है। ऐसी स्थिति मे व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकार को समाप्त तो नही किया जा सकता है, परन्तु नियन्त्रित अवश्य किया जाना चाहिये। नागरिकों के बीच बढ़ती अमीरी और गरीबी की खाई को पाटने के लिये, बेरोजगारों को रोजगार देने के लिए सम्पत्ति की न्यूनतम एवं अधिकतम सीमा आवश्यक तौर से निश्चित की जानी चाहिये। अभी तक हमारे देश में मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया है। जिसके अन्तर्गत ही व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनों ही तरह के उद्योग धन्धे विकसित हुये है। अब जिस बात की आवश्यकता है वह यह है कि सहकारिता को बढ़ावा दिया जाये। स्वावलम्बी आर्थिक संस्थान का जाल सहकारिता के आधार पर देश के दीन-दलित और गरीब समूह को स्वावलम्बी बनाने के लिये फैलाये जायें। युवकों को रोजगार देने के लिये दस्तकारी, कुटीर उद्योग एवं स्वरोजगार तथा रोजगार के लिये अत्यधिक अवसर जुटा कर ही हम अपनी भटकी हुई युवा शक्ति को रचनात्मक देश निर्माण के कार्य में लगा सकते हैं।

हमारा समाजवाद वर्ग संघर्ष के बजाय वर्ग सहयोग पर आधारित होगा। जिसमें मिल मालिक और मजदूर, भू स्वामी और किसान, लोक सेवा से जुड़े हुए लोग सभी एक-दूसरे को सहयोग करते हुए आत्म निर्भरता को हासिल करेंगे और देश को गति देंगे। इस व्यवस्था के अन्दर वृद्ध व्यक्तियों, बेघर महिलाओं एवं

11
91S14 —

अनाथ बच्चों के भरण-पोषण की गरिमाशील व्यवस्था और आवासीय औद्योगिक संस्थान स्थापित किये जायेंगे । भिक्षा वृत्ति समाज के माथे पर घिनौना कलंक है । इसे मिटाने का भरपूर प्रयास किया जाएगा । देश के उत्पादन में वृद्धि हो और लाभ के वितरण की समुचित व्यवस्था हो । कृषि को विकसित होने के पूरे संसाधन हो । आत्म निर्भर गाव सहकारी उद्यम, कुटीर उद्योग के द्वारा हम एक अच्छे आर्थिक और सामाजिक ढांचे का निर्माण कर सकते है ।

उपरोक्त सारी बातों से भी महत्व की बात यह है कि जब तक हमारे देश मे भ्रष्टाचार रहेगा, अनैतिकता रहेगी, स्वार्थपरिता रहेगी कोई भी व्यवस्था हमारा और हमारे देश का हित पूरा नही कर सकेगी । आज सर्वाधिक आवश्यकता इस बात की है कि लोगों के अन्दर राष्ट्रीय नैतिकता, कर्त्तव्य परायणता और देश सेवा की भावना का विकास हो । इसके बिना न तो हम किसी स्वस्थ समाज की रचना कर सकते हैं और न देश का विकास ।

प्रजातन्त्रीय समाजवाद हमारी आवश्यकता है, जिसके लिए समस्त भारतीयों को जाति, धर्म, लिंग एव क्षेत्रीयता का भेद भुला कर दृढ़ संकल्प होकर कार्य करना होगा । प्रजातन्त्रीय समाजवाद लाने के लिए साधन सम्पन्न एवं साधन-विहीन समस्त भारतीयों को अपना योगदान अपना पुनीत कर्त्तव्य समझ कर देना होगा जिससे विकास के समान अवसर बिना भेदभाव के समस्त भारतीयों को उपलब्ध हो सकें । इसी मे हम सभी का और हमारे देश का हित निहित है, इसके अलावा हमारे पास अन्य कोई विकल्प नही बचा है ।

अन्त में यह निवेदन किया जाना भी आवश्यक है कि देश को विकास की ओर ले जाने के लिए और समाज को स्वस्थ बनाने के लिए हमे नारी को समाज में सम्मानित, सुरक्षित एवं गरिमापूर्ण स्थान देना होगा ।

यदि हमारे समाज मे नारी सुशिक्षित सुरक्षित एवं अधिकारयुक्त होगी तो निश्चित ही हमारी संतानें ज्यादा स्वस्थ, उन्नतिशील और सद्भागी बनेगी । हमे समाज मे ऐसे जीवन मूल्यों को विकसित करना है, जिससे कि बेटी का जन्म लेना भी उसी तरह से सौभाग्य सूचक माना जा सके कि जिस तरह से बेटे का । दहेज की प्रथा समाप्त करके, बाल-विवाह और अनमेल विवाह को रोककर, नारी शिक्षा को बढ़ावा देकर ही हम नारी शक्ति को राष्ट्र की शक्ति के साथ जोड़कर कामयाबी के मार्ग पर आगे बढ़ सकते हैं ।